।। श्रीः ।।

हरजीवनदास संस्कृत ग्रन्थमाला २०

मध्यमव्यायोगः

'कला' 'प्रतिकला' संस्कृत-हिन्दी-व्याख्योपेतः

संस्कर्ता

आचार्य श्रीशेषराजशर्मा रेग्मी

व्याख्याकारः

श्री लोकमणि दाहालः



चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन

पोस्ट बाक्स संख्या ११३८

वाराणसी-२२१००१ (भारत)

॥ श्रीः ॥

हरजीवनदास संस्कृत ग्रन्थमाला
२०



म हा क वि भा स प्र णी तः

मध्यमव्यायोगः

'कला' 'प्रतिकला' संस्कृत-हिन्दी-व्याख्योपेतः

संस्कर्ता
आचार्य श्रीशेषराजशर्मा रेग्मी

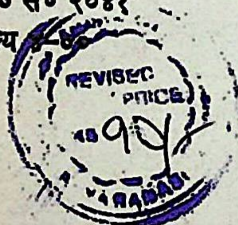
व्याख्याकारः
श्री लोकमणि दाहालः
एम. ए. (द्वय), बी. एड्.



चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन
भारतीय सांस्कृतिक साहित्य के प्रकाशक व विक्रेता
पोस्ट बाक्स संख्या ११३८
के० ३७/१३० गोपाल मन्दिर लेन
वाराणसी-२२१००१ (भारत)

प्रकाशक
चौखम्बा अमरभारती प्रकाशन
पोस्ट बाक्स संख्या ११३८
के० ३७/१३०, गोपाल मन्दिर लेन
वाराणसी–२२१००१

प्रथम संस्करण सन् १९८४ ई०
वि० सं० २०४१
मूल्य



अन्यप्राप्तिस्थान
चौखम्बा संस्कृत पुस्तकालय
कचौड़ी गली
वाराणसी २२१००१ (भारत)

मुद्रक—विद्याविलास प्रेस, गोपाल मन्दिर लेन, वाराणसी–२२१००१

HARJIVANDAS SANSKRIT GRANTHAMALA
20

MADHYAMA-VYĀYOGA

OF

MAHĀKAVI BHĀSA

With

'Kalā' 'Pratikalā' Sanskrit-Hindi Commentaries

Edited by
ACHARYA SHESHARAJA SHARMA 'REGMI'

Commentary by
Shri LOKMANI DAHĀL
M. A. (Double) B. Ed.



Chaukhamba Amarabharati Prakashan
Oriental Publishers & Foreign Book-Sellers
Post Box No. 138
K. 37/130, Gopal Mandir Lane
Varanasi-221001 (India)

Chaukhamba Amarabharati Prakashan
Post Box No. 138
K. 37/130, Gopal Mandir Lane
Varanasi-221001 (India)

First Edition 1984
Price Rs.

Also can be had from—
Chaukhamba Sanskrit Pustakalay
Kachauri Gali
Varanasi-221001

उन पाठकों को

जिनकी आवश्यकता की पूर्ति

इससे

हो सकती है।

किञ्चित्प्रास्ताविकम्

संस्कृत वाङ्मय के प्रथम रूपककार महाकवि भास के 'रूपकचक्र' का एक रूपक 'मध्यमव्यायोग' की 'कला' एवं 'प्रतिकला' टीकाएँ पाठक के सम्मुख प्रस्तुत हैं। इनको प्राच्यविद्या के प्रकाण्ड मनीषी पूज्यपाद गुरुवर आचार्य श्रीमान् शेषराजशर्मा रेग्मी महोदय के निर्देशन एवं आशीर्वाद प्राप्त हैं। वस्तुतः गुरुचरण का सोत्साह पथप्रदर्शन ही इस सटीक संस्करण की मूल भित्ति है। आशा है पाठक इससे लाभान्वित होंगे। 'गच्छतः स्खलनम्' पर सुधार के लिए सुझावों का सावनत स्वागत है।

विनयावनत

—लोकमणि दाहालः

गोशाला, वाराणसी

वि० सं० २०४०

प्रस्तावना

महाकवि भास

महाकवि भास संस्कृत रूपक साहित्य के ध्रुवतारा हैं। उनके रूपकीय प्रकाश से सम्पूर्ण रूपक साहित्य ही आलोकित हो उठा है। जैसे कि कहा गया है—

"सूत्रधारकृतारम्भैर्नाटकैर्बहुभूमिकैः।
सपताकैर्यशो लेभे भासो देवकुलैरिव।"

हर्षचरित–१५

भास संस्कृत के रूपककारों में मूर्द्धन्य माने गए हैं। अब तक के ज्ञात रूपककारों में भास सर्वप्राचीन माने जाते हैं। इसकी पुष्टि निम्नाङ्कित प्रमाणों से की जाती है—

(१) संस्कृत साहित्य के महानट कालिदास ने अपनी उत्कृष्ट कृति 'मालविकाग्निमित्रम्' की प्रस्तावना में आदरपूर्वक 'प्रथितयशसां भास-सौमिल्लकविपुत्रादीनां प्रबन्धानतिक्रम्य वर्तमानकवेः कालिदासस्य क्रियायां कथं परिषदो बहुमानः' कहकर उनकी प्राचीनता को खुले शब्दों में स्वीकार किया है।

(२) भास के रूपकों में प्रयुक्त तत्कालीन समाज के दैनिक व्यवहार में प्रयोग की जाने वाली भाषा मिलती है। टी० गणपतिशास्त्री के अनुसार संस्कृत भाषा बोल-चाल के रूप में ई० पू० चौथी सदी तक प्रयुक्त थी। 'अहं प्रीतोस्मि शीघ्रमागच्छ, भवतु विज्ञातम्, भवतु दृष्टम्, किन्तु खलु करिष्ये, कथं गत एव, कथमिव' आदि का प्रयोग बोल-चाल की भाषा के रूप में है। इससे यह सिद्ध होता है कि भास उस समय के थे जब संस्कृत भाषा सभी वर्गों में नहीं तो कम से कम सभ्य वर्गों के बोल-चाल में मुख्य रूप में प्रयुक्त होती थी और अन्य वर्ग भी इसे सामान्य रूप में ही बोला करते थे।

(३) भास की शैली अत्यन्त सरल है, क्लिष्टता उनसे बहुत दूर है। कई श्लोक तो ऐसे हैं, जिनका अन्वय भी नही करना पड़ता। यह शैली कालिदास को भी कुछ हद तक प्रिय है। भास और महर्षि बाल्मीकि की शैली तो अत्यन्त निकट है। इससे यह सिद्ध होता है कि भास प्रकृति के बहुत निकट थे और उनको अपने प्रखर पाण्डित्य को दर्शाने की कोई अभिलाषा नहीं थी, अर्थात् उनके समय में वे एकमात्र कवि थे—उन्हें न किसी से प्रतियोगिता थी और न वे किसी के प्रतियोगी थे।

(४) भास के 'रूपक' कथावस्तु पर जोर देते हैं। अनावश्यक एवं असम्भव घटनाओं का समावेश करके पाण्डित्य दिखाना भास को कतई पसंद नहीं था। घटनाचक्र अपने स्वाभाविक रूप में आगे बढ़ता है। इससे यह पता लगता है कि भास के रूपक कविख्याति के लिए नहीं, अपितु तत्कालीन रङ्गमञ्च के लिए लिखे गए हैं और रङ्गमंच के प्रिय 'चाक्यार' लोगों से उनकी परम्परा अक्षुण्ण रखे जाने का पिशरोडी का तर्क उपयुक्त सा लगता है।

(५) भास के रूपक नान्दीपाठ से नहीं, अपितु सूत्रधार के प्रवेश से प्रारम्भ होता है, जो कि स्वयं एक प्राचीन शैली है। बाद के सभी नाटकों के प्रारम्भ में नान्दीपाठ दिया गया है!

(६) भास के रूपकों में कहीं भी लेखक का नाम नहीं दिया गया है। ऐसा लगता है कि ये सभी रूपक कवि के निर्देशन में खेले भी गए थे। अतः अपने ही सामने अपना गुणकीर्तन भास को मान्य न रहा होगा—यह एक प्राचीन शैली है। भास के बाद के रूपकों में कवियों तथा नाटक के नामों का उल्लेख मिलता है।

(७) भास के रूपकों में बोलचाल के शब्दों का भरमार प्रयोग है, जो पाणिनीय व्याकरण से सिद्ध नहीं होते। जैसे 'व्यूढोराः' (इसमें 'उरःप्रभृतिभ्यः कप्' (पा० सू० ५.४.१५१) सूत्र के अनुसार कप् प्रत्यय होकर 'व्यूढोरस्कः' होना चाहिए था, इसी प्रकार शब्दापयामि, आपृच्छामि, काशिराज्ञे, सर्वराज्ञः आदि पा० व्या० के विरुद्ध प्रयोग देखने को मिलते है। इससे ऐसा आभास होता है कि भास के नाटक तब लिखे गए थे जब साहित्यिक

और बोलचाल की भाषा के रूप पूर्णतः पृथक् नहीं हुए थे। ऐसा समय सम्भवतः पाणिनिकाल के ही इर्द-गिर्द रहा होगा।

(८) भास के रूपकों में बहुत जगह उपमान शब्द दैनिक जीवन वा लौकिक विषय से लिए गए हैं। प्रस्तुत रूपक में घटोत्कच से त्रस्त केशवदास की तुलना व्याघ्र से त्रस्त बैल के साथ है (म० व्या० श्लो० ३), ऐसे ही 'सतडिदिव घनः, त्रिश्रृङ्गो वंशपर्वतः, गजराजदन्तभग्नतरुरिव, गज इव दृढपाशैः पीडितः, शक्रध्वज इवोत्सवे, आसारवर्षमिव गोवृषभः सलीलः, यथा नदीनां प्रभवः समुद्रः, यथेन्द्रियाणां प्रभवं मनोऽपि, कलभदशनदंष्ट्रः लाङ्गलाकारनासः करिवरकरबाहुः, गोपहीनाः यथा गावः आदि उदाहरण के रूप में लिये जा सकते हैं। ऐसे उदाहरण लौकिक व्यवहार में प्रचलित हैं।

(९) भास के रूपकों में चारुदत्त, प्रतिज्ञायौगन्धरायण, अविमारक और स्वप्नवासवदत्तम् ऐसे हैं जिनकी कथावस्तु लोकप्रचलित एवं काल्पनिक है। वैसे रामायण, महाभारत, हरिवंश आदि से भी कुछ रूपकों की कथावस्तु मिलती जुलती है मगर प्रस्तुतीकरण से ऐसा लगता है कि ये भी सीधे उन-उन पुस्तकों से न लेकर लोकप्रचलन से ही ली गई हैं। यह सत्य है कि वर्तमान रामायण के लिखे जाने के बहुत पहले से ही राम की कथा प्रचलित थी। बाद के युग में इसका साहित्यिक रूप सामने आया है। वैसे उदयन की कथा भी बड़े बूढ़ों में किंवदन्ती के रूप में थी ही जैसे कि महासारस्वत कालिदास उसको इस प्रकार कहते हैं—

"प्राप्यावन्तीनुदयनकथाकोविदग्रामवृद्धान्"

(१०) भास के रूपकों में चित्रित सामाजिक स्थिति, कालिदास, शूद्रक आदि के नाटकों में चित्रित सामाजिक स्थिति से अत्यन्त प्राचीन है।

(११) भास के रूपकों में बौद्ध वा जैन आदर्श का कोई उल्लेख नहीं है प्रत्युत जो है वह एकदम वैदिक धर्म पर आश्रित है। अतः उनका परिवेश प्राचीनतम है।

(१२) भरत मुनि का मत है कि नाटक में दूर से पुकारना, मृत्यु, युद्ध आदि प्रत्यक्ष रूप से न दिखाया जाय, मगर भास के नाटकों में यह

दिखाया गया है। घटोत्कच मध्यम को पुकारता है, घटोत्कच और भीम मल्लयुद्ध करते हैं आदि। इससे ऐसा आभास होता है कि भासकालीन समाज ऐसे वर्णन को पसन्द करता होगा, जब कि भरतकालीन समाज नहीं। अतः यह प्रमाणित करता है कि भास के रूपक का परिवेश भरत मुनि के काल से पूर्व का है। दूसरी बात यह है कि भरत के अनुसार काव्य का आस्थापन सूत्रधार से भिन्न (दूसरे) नट को करना चाहिए मगर भास के नाटक में यह काम सूत्रधार ही करता है। अतः महाकवि भास भरत मुनि से अवश्य प्राचीन हैं।

भास हैं कहाँ के ?

भास के जीवनवृत्त के सम्बन्ध में हम नहीं के बराबर जानते हैं। एक तर्क यह दिया गया है कि उनके रूपक सूत्रधार द्वारा प्रारम्भ किए जाते हैं, यह दक्षिण की परम्परा है। अतः भास दक्षिण भारत के ही होंगे। मगर यह तर्क पुष्ट नहीं है क्योंकि यह भारतीय नाटचशास्त्र की प्राचीन परम्परा है और दक्षिण ने उसे सुरक्षित रख लिया है। तो फिर भास है कहा के ? उत्तर में यह कहा जाता है कि भास कौसाम्बी के रहनेवाले और राजा उदयन के दरबारी कवि थे। इसका प्रमाण यह है कि स्वप्नवासवदत्तम् और प्रतिज्ञा-यौगन्धरायण दोनों में कौसाम्बी के राजा उदयन को नायक बनाया गया है।

भास का समय

भास के समय के सम्बन्ध में भी बहुत मतभेद है। कुछ मत यहाँ दिए जाते हैं :—

(१) कालिदास ने अपनी कृति 'मालविकाग्निमित्रम्' में भास को प्रथम नाटककार के रूप में विख्यात माना है, इससे यह पुष्ट होता है कि भास कालिदास के पूर्ववर्ती हैं। 'प्रथितयशाः' शब्द से यह ज्ञात होता है कि भास पर्याप्त समय से पूर्व के हैं। कवि के रूप में ख्याति पाने के लिए कम से कम दो शताब्दी लगनी ही चाहिए। कालिदास का समय ई० पू० प्रथम सदी मान लिया गया है। इससे भास का समय न्यूनतम ई० पू० ३री सदी होनी चाहिए।

(२) 'मृच्छकटिकम्' के रचयिता शूद्रक भास के चारुदत्त रूपक से काफी प्रभावित हैं वा यों कहें कि मृच्छकटिकम् चारुदत्त का ही उत्तर भाग है। शूद्रक का समय ए० स्मिथ के अनुसार २२०–१९७ ई० पू० है। भास के ही जीवनकाल में उनके नाटक का उत्तरार्द्ध दूसरे द्वारा लिखा जाना संभव नहीं जान पड़ता। बात यह हो सकती है कि शूद्रक के समय तक भास की कृतियाँ जनजीवन में प्रसिद्ध हो चुकी थीं और उनसे प्रभावित होकर शूद्रक ने उसका उत्तरार्द्ध लिखा होगा। इस तरह किसी भी रचना को लोकप्रिय होने में उस साधनहीन युग में तो कम से कम दो सौ वर्ष तो लग ही गये होंगे। इससे ऐसा लगता है कि भास करीब ४०० ई० पू० के लगभग के हो सकते हैं।

(३) चाणक्य ने अपने 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' में भास के 'प्रतिज्ञा-यौगन्धरायण' नाटक के चतुर्थ अङ्क के दूसरे श्लोक को 'अपीह श्लोकौ भवतः' कहकर उद्धृत किया है। इससे ऐसा लगता है कि भास चाणक्य के समय तक एक प्रतिष्ठित विद्वान् के रूप में प्रख्यात हो चुके थे। चाणक्य का समय ई० पू० ३०० करीब है। प्रसिद्धि पाने के लिए भास को कम से कम उनसे एक सौ वर्ष पूर्व के तो होने ही चाहिए।

भास ने स्वयं ही 'प्रतिमा' नाटक अङ्क ५ में तापसरूपी रावण से कुछ ग्रन्थों के नाम कहलवायें हैं, उनमें बार्हस्पत्य अर्थशास्त्र का तो उल्लेख है मगर चाणक्य का नहीं। अतः भास चाणक्य से पूर्वकाल के हैं।

(४) भास के समय को राजा उदयन का समकालिक मानकर ई० पू० ४५० माना गया है। मगर यह भी सन्देहहीन नहीं है। किसी किसी विद्वान् का भी मत ऐसा है कि भास ५०० ई० पू० से पहले के हैं।

भास की कृतियाँ

अनेक वादों और विवादों के बाद यह करीब करीब तय हो चुका है कि भास के द्वारा रचित १३ रूपक हैं। इन सबका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

रूपक के नाम	प्रकार	अङ्क	कथास्रोत	कथावस्तु
१. प्रतिज्ञायोगन्धरायण	नाटक	४	बृहत्कथा	उदयन और वासवदत्ता का विवाह।
२. स्वप्नवासवदत्तम्	,,	६	,,	उदयन और पद्मावती का विवाह।
३. प्रतिमा		७	रामायण	राम वनगमन, रावण-वध, रामराज्याऽभिषेक आदि।
४. अभिषेक	,,	६	रामायण	सीताहरण, रावणवध, रामराज्याऽभिषेक आदि।
५. मध्यमव्यायोग	व्यायोग	१	महाभारत	भीम द्वारा ब्राह्मण को घटोत्कच से बचाना।
६. दूतवाक्य	,,	१	,,	श्रीकृष्ण का पाण्डवों का दूत बनकर दुर्योधन को समझाना।
७. दूत घटोत्कच	,,	१	,,	श्रीकृष्ण का दूत बनकर घटोत्कच का धृतराष्ट्र के पास जाना।
८. कर्णभार	,,	१	,,	कर्ण द्वारा इन्द्र को कवच देना।
९. ऊरुभङ्ग	,,	१	,,	भीम द्वारा दुर्योधन का ऊरुभंग।
१०. पञ्चरात्र	नाटक	३	,,	द्रोण से पाँच रात के अन्दर पाण्डवों को खोज निकालकर राज्य दिलवाना।
११. बालचरित	,,	५	हरिवंश	श्रीकृष्ण का जन्म, कंस-वध।
१२. अविमारक	,,	६	बृहत्कथा	अविमारक और कुरङ्गी का प्रेम-विवाह।
१३. चारुदत्त	,,	४	लोकप्रचलित कथा	चारुदत्त एवं वसन्तसेना का प्रेम।

वैसे तो इन १३हों नाटकों में किसी भी लेखक का नामनिर्देश नही है। अतः इनके लेखक के विषय में विद्वान् एकमत नहीं हैं। कोई इन्हें भास की रचना मानते हैं तो कोई किसी अज्ञात लेखक की। कोई तो इसे संकलन ही मानते हैं। इनको भासकृत मानने वालों में टी० गणपति शास्त्री प्रथम हैं। वे इस पक्ष में निम्नांकित तर्क प्रस्तुत करते हैं—

(१) बाणभट्ट ने हर्षचरित (६ सदी ई०) में लिखा है कि सूत्रधार के प्रवेश से आरम्भ होने वाले नाटकों से भास ने प्रतिष्ठा पायी है—

"सूत्रधारकृतारम्भैर्नाटकैर्बहुभूमिकैः।
सपताकैर्यशोलेभे भासो देवकुलैरिव॥"

(२) राजशेखर (९वीं शताब्दी) ने अपनी 'काव्यमीमांसा' में भास के नाटकों में से स्वप्नवासवदत्तम् का उल्लेख किया है—

"भासनाटकचक्रेऽपि छेकैः क्षिप्ते परीक्षितुम्।
स्वप्नवासवदत्तस्य दाहकोऽभून्न पावकः॥"

(३) रामचन्द्र गुणचन्द्र (१२ वीं शताब्दी) ने अपने 'नाट्यदर्पण' में भास को नाटककार के रूप में उल्लेख किया है—

'यथा भासकृते स्वप्नवासवदत्ते, (अंक ४ श्लोक ३ के बाद)

(४) कालिदास ने 'मालविकाग्निमित्रम्' की प्रस्तावना में भास को प्रख्यात होने का उल्लेख किया है। उनपर भास के नाटकों का भी अच्छा प्रभाव पड़ा है। जैसे—

'चक्रारपङ्क्तिरिव गच्छति भाग्यपङ्क्तिः'

—स्वप्नवासवदत्तम् १४।

'नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण'

—उत्तरमेघ ४६।

उक्त उद्धरणों से यह प्रमाणित किया गया है कि उस नाटकचक्र के रचयिता भास ही हैं।

तो क्या सभी १३ रूपक भास के ही हैं? इसके उत्तर में स्वीकारात्मक और निषेधात्मक दोनों तर्क प्रस्तुत किए गए हैं। जैसे—

(१) टी० गणपति शास्त्री १३ हों रूपकों को भास की ही रचना मानते हैं।

(२) किसी ने तो स्वप्नवासवदत्तम्, प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् एवं पञ्चरात्रम् को ही भास की रचना मानी है—शेष को नहीं।

(३) 'सुभाषितावलि' में भास के नाम से उद्धृत श्लोकों का इन रूपकों में न होने के तर्क को उपस्थापन करते हुए कुछ विद्वान् इन १३ रूपकों में से किसी को भी भास की रचना नहीं मानते।

वाद एवं प्रतिवाद पर विचार करने पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि और न सही, तो स्वप्नवासवदत्तम् को भास की कृति मानना ही चाहिए। इसके लिए राजशेखर साक्षी हैं। भले ही बाणभट्ट भास के नाटक-चक्र का उल्लेख तो करते हैं मगर किसी का नाम नही लेते। शेष रूपकों में भी प्रविधि, प्रयुक्त प्राकृत भाषा, छन्द, शैली आदि में एकरूपता, सूत्रधार के प्रवेश द्वारा नाटक का आरम्भ (नान्दीपाठ का न होना), प्रस्तावना के स्थान पर 'स्थापना' का प्रयोग, समानभाव वाला भरत वाक्य, सभी में भरतनाट्यशास्त्र के नियमों की अनदेखी करना, कई नाटकों में प्रतिहारी का नाम विजया एवं कञ्चुकी का नाम बादरायण होना, सभी में नाटककार का नाम, नाटक का नाम एवम् उपस्थिति का उल्लेख न होना, सभी में एक जैसी नाटकीय सामाजिक परिस्थिति, आदि अन्तःसाम्यों, बहिःसाम्यों को देखते हुए यह मानना पड़ता है कि ये १३ रूपक किसी एक ही की रचनाएँ हैं और भास को नाटकचक्र के रचयिता के रूप में बाणभट्ट एवं स्वप्नवास-वदत्तम् के रचयिता के रूप में राजशेखर के साक्ष्य को मानकर यह प्रमाणित होता है कि उक्त नाटकचक्र भास का ही है।

भास की नाट्यकला

यह तो मानी हुई बात है कि भास सबसे प्राचीन नाटककार हैं। उनकी शैली, नाट्यकला एवं भाषा इसका साक्ष्य देते हैं। उनके नाटकों की मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार गिनाई गई हैं—

(१) भाषा की सरलता—भास की भाषा इतनी सरल है कि कहीं

कहीं श्लोकों में भी अन्वय नहीं करना पड़ता। प्रचलित शब्दों के प्रयोग एवं बोलचाल की भाषा इसके उल्लेखनीय पक्ष हैं।

(२) अकृत्रिम शैली—भास की शैली सरल एवं सरस है। कहीं भी प्रखर पाण्डित्य के लिए दुरूह वा निरर्थक शब्दों का प्रयोग नहीं किया गया है।

(३) यथार्थ वर्णन—उनके वर्णनों में यथार्थता है। कहीं भी काव्यसौरभ के बहाने अयथार्थ वर्णन नहीं है।

(४) व्यक्तित्वप्रधान पात्र—भास के पात्र अपना व्यक्तित्व, गौरव रखते हैं। किसी को भी उनका सन्देशवाहक नहीं बनाया गया है। वे अपने स्तर एवं व्यक्तित्व के अनुसार बातें एवं काम करते हैं।

(५) रङ्गमञ्चीय प्रस्तुतीकरण—भास के नाटक रङ्गमञ्च के हिसाब से बहुत ही उपयुक्त हैं। उन्होंने लक्षण ग्रन्थों का अनुसरण करने के बदले रङ्गमञ्च का अनुगमन किया है।

(६) सजीव, मौलिक, प्रभावोत्पादक घटनाचक्र—भास के नाटकों में जो भी घटना उपस्थित कराई गई है, वह सजीव एवं प्रभावोत्पादक तो है ही साथ ही कथावस्तु रामायण, महाभारत आदि से लेने पर भी प्रस्तुतीकरण की मौलिकता उनमें है।

(७) रोचक वर्णन—भास की एक और विशेषता यह है कि उनका सामान्य वर्णन भी रोचक है। उनकी कल्पनाशक्ति की रमणीयता वर्णनीय है।

(८) वीर रस की प्रधानता—भास के नाटकों में अधिकतर वीर रस की प्रधानता है। वैसे उनमें प्रेम, कारुण्य एवं विस्मय के भी सफल दृश्य हैं फिर भी वीर रस उनका प्रिय रस है।

(९) नाटकीय गुणों की सफल उपस्थिति—भास के सभी नाटकों में घटना की एकता, घटना की सार्थकता, घटनाओं का घात-प्रतिघात एवं गति, चरित्र-चित्रण में व्यक्तित्व का प्राधान्य, स्वाभाविकता, कवित्व, प्रवाह, सजीवता आदि नाटकीय गुण भरपूर पाए जाते हैं। कथावस्तु का विकास इस तरह होता है कि उसमें स्वाभाविकता को कायम रखते हुए गतिशीलता के साथ-साथ परिपाक भी होता रहता है।

(१०) चरित्रप्रधान पात्र---भास के पात्र चरित्र के लिए मर मिटते हैं। राजा उदयन दूसरी शादी तो करता है मगर आदर्श चरित्र के अन्दर रहकर। मध्यमव्यायोग में मातृभक्ति के लिए घटोत्कच मर मिटता है और उसके हर पात्र अपने आदर्श के लिए दत्तप्राण हैं। वृद्ध आदर्श पिता हैं तो सभी पुत्र आदर्श पुत्र हैं।

(११) मुद्रालङ्कार का प्रयोग---भास ने प्रायः नाटक के प्रमुख पात्रों का नाम मङ्गलाचरण में दिया है।

(१२) भास की प्रिय रीति वैदर्भी है और उसमें ओज, प्रसाद, माधुर्य ये तीनों गुण यथास्थान हैं। अनुप्रास, यमक, उत्प्रेक्षा, उपमा, अर्थान्तरन्यास भास के ग्राह्य अलंकार हैं मगर भास चमत्कार के लिए नहीं प्रत्युत सरसता के लिए उनका प्रयोग करते हैं। अनुष्टुप् छन्द उनका अतिप्रिय छन्द है वैसे वे वसन्त-तिलका, शार्दूलविक्रीडित, उपजाति, मालिनी तथा वंशस्थ छन्दों का भी प्रायः प्रयोग करते हैं। कभी-कभी तो वे श्लोकों में ही पूर्वार्द्ध-उत्तरार्द्ध करके संवाद कराते हैं। जैसे मध्यमव्यायोग में---

घटोत्कचः---शैलकूटं मया क्षिप्तं प्राणानादाय यास्यति।
भीमः---रुष्टोपि कुञ्जरो वन्यो न व्याघ्रं घर्षयेद् वने॥ श्लो० ४४॥

मध्यमव्यायोग का संक्षिप्त परिचय

व्यायोग क्या है ?---रूपक के दश मुख्य भेदों में से एक भेद व्यायोग है। जैसे कि कहा गया है---

"नाटकमथ प्रकरणं भाण-व्यायोग-समवकार-डिमाः।
ईहामृगाङ्कवीथ्यः प्रहसनमिति रूपकाणि दश॥---साहि० द०

'नाटकं सप्रकरणं भाणप्रहसनं डिमः।
व्यायोग - समवकारौ वीथ्यङ्केहामृगा इति॥---दशरूपकम्

व्यायोग की परिभाषा इस प्रकार की गई है---

ख्यातेतिवृत्तो व्यायोगः ख्यातोद्धतनराश्रयः।
हीनो गर्भविमर्शाभ्यां दीप्ताः स्युर्डिमवद्रसाः॥

अस्त्रीनिमित्तसंग्रामो जामदग्न्यजये यथा ।
एकाहाचरितैकाङ्को व्यायोगो बहुभिर्नरैः ।।

दशरूपक ३.६०

अर्थात् व्यायोग वह रूपक है जिसमें—

(१) कथावस्तु इतिहास प्रसिद्ध हो,

(२) वह किसी प्रसिद्ध उद्धत व्यक्ति में आश्रित हो;

(२) गर्भ और विमर्श सन्धियों को छोड़कर शेष मुख, प्रतिमुख एवं उपसंहृति तीन ही नाटकसन्धियाँ हों,

(४) हास्य एवं शृङ्गार से भिन्न अन्य कोई रस मुख्य हों,

(५) युद्ध का वर्णन हो मगर वैसा युद्ध स्त्री के निमित्त न हो;

(६) घटना एक ही दिन की हो,

(७) एक ही अङ्क रहे,

(८) स्त्री पात्र कम और पुरुषपात्र बहुत हों और

(९) वीर रस मुख्य रहे तो और अच्छा ।

शाब्दिक दृष्टि से व्यायोग का अर्थ है व्यायुज्यन्ते बहवः पुरुषाः इति व्यायोगः । जिससे बहुतसे पुरुष पात्र व्याप्त हों वह व्यायोग होता है । दूसरा यह है कि (वि + आङ् + युञ्ज् + घञ्) व्यायोगः, विशेषेण संयोगः अथवा व्यायुज्यते इति व्यायोगः ।

कुछ प्रसिद्ध व्यायोग हैं---मध्यमव्यायोग, जामदग्न्यजय, सौगन्धिकाहरण आदि ।

मध्यमव्यायोग

(१) मध्यमव्यायोग यथार्थ में व्यायोग है क्योंकि इसका कथानक इतिहासप्रसिद्ध है। इसमें महाभारत की कथा में आश्रित कथानक है। महाभारत (आ० प० १५६·१६३) में भीम द्वारा वकासुर से ब्राह्मण परिवार की मुक्ति का वर्णन है। उसीको भास ने घटोत्कच में नाटकीयता प्रदान की है। मध्यमव्यायोग का घटोत्कच एक सदाचारी एवं मातृभक्त है। वह ब्राह्मणों को पूज्य मानता है और माता की आज्ञा होने पर ही वह अनचाहे

ही ब्राह्मण वटु को पकड़ लेता है। मध्यम पुत्र का मध्यम होना शायद भास ने 'ऐतरेय ब्राह्मण' के शुनःशफोपाख्यान से लिया है। मगर शुनःशेफ पैसे के लिए बेच दिया जाता है और भास का मध्यम स्वेच्छया कर्तव्य की भावना से प्राण देने को तयार होता है। शुनःसेफ प्राणरक्षा के लिए रोता है भास का मध्यम प्राणदान में सहर्ष तत्पर है।

(२) इसका कथानक प्रसिद्ध उद्धत घटोत्कच में आश्रित है। उसको उसकी माँ उन्मतक ! कहकर सम्बोधन करती है।

(३) इसमें मुख्य रस वीर है और भयानक, (घटोत्कच का पीछा करना) करुण (मध्यम पुत्र का जाना) अद्भुत (मायापाश से भीम को बाँधना), आदि अंगी रस हैं। हास्य और शृङ्गार का कतई प्रयोग नहीं है।

(४) भीम और घटोत्कच का युद्धवर्णन है लेकिन यह युद्ध स्त्री के कारण न होकर ब्राह्मण बटु के बदले भीम को ले जाने के लिए हैं।

(५) घटना एक ही दिन की है,

(६) इसमें केवल एक अङ्क है।

(७) कुल पात्र आठ हैं और उनमें से स्त्रीपात्र केवल दो हैं।

कथानक

इसकी कथा वन के रास्ते से जाते हुए ब्राह्मण परिवार को घटोत्कच के पीछा किये जाने के बाद से प्रारम्भ होती है। कुरुजाङ्गल राज्य के 'यूप' गाँव के निवासी केशवदास ब्राह्मण अपने मामा यज्ञदास के यहाँ लड़के का जनेऊ कराने के लिये जङ्गल के रास्ते से होकर जा रहे थे। कुछ दूर जाने के बाद रास्ते में उनको जलक्लिन्न मुनि मिले। उन्होंने केशवदास को वन में राक्षस आदि का भय बने रहने के कारण होशियारी के साथ आगे बढ़ने का सुझाव दिया था। वे कुछ ही आगे बढ़े थे कि घटोत्कच ने उनका पीछा करना शुरू किया। यहीं से व्यायोग का प्रारम्भ होता है। प्रारम्भ में नान्दी के बाद रङ्गमंच पर सूत्रधार आता है और सामाजिकों से कुछ कहना चाहता है। उसके कहने से पहले ही नेपथ्य से "भोस्तात ! को नु खल्वेषः" अर्थात् हे पिता जी ! यह कौन है ? की आवाज आती है और वह आवाज ब्राह्मण वटु की आवाज होती है। तब मञ्च पर पत्नी और तीनों लड़कों के साथ वृद्ध ब्राह्मण आते

हैं। घटोत्कच उनका रास्ता रोक लेता है। ब्राह्मण और कोई रास्ता न देख-कर घटोत्कच से ही उससे मुक्ति पाने का उपाय पूँछते हैं। घटोत्कच उनके लड़कों में से एक लड़के को छोड़ देने से शेष की मुक्ति कर देने और उसके उसकी माँ के भोजन के लिए मनुष्य की तलाश करने एवं उनका पीछा करने की बात कहता है। उसपर वृद्ध स्वयम् राक्षस के साथ जाना चाहते हैं। ब्राह्मणी, पहले, दूसरे एवं तीसरे लड़के उसके लिए अपने को तत्पर बताते हैं। बूढ़े होने के नाते ब्राह्मण को, स्त्रीजन होने के कारण उसकी माँ को पसन्द न होने से ब्राह्मणी को लेने के लिए घटोत्कच इनकार करता है। तब वह बड़ा लड़का जाने को उद्यत होता है पर बाप उसे रोक लेता है और जाने में तत्पर छोटे को माँ रोक लेती है। तब मझला लड़का जाने को तत्पर होता है और मरने से पहले पानी पीकर प्यास बुझाने के लिए घटोत्कच की अनुमति लेकर चला जाता है। उसे देर करते देखकर घटोत्कच 'मध्यम, मध्यम' कहकर पुकारता है। वह आवाज भीमसेन तक पहुँचती है और कुस्ती का अभ्यास करते हुए भीम उस अभ्यास को छोड़कर आ जाते हैं। तब तक पानी पीने के लिए गया हुआ मध्यम भी आ जाता है और घटोत्कच उसे लेकर चलने लगता है। वृद्ध उसको बचाने के लिए भीम से प्रार्थना करते हैं और भीम घटोत्कच को रोक लेते हैं और ब्राह्मणपुत्र के लिए स्वयम् जाने को तत्पर होते हैं। घटोत्कच उनको चलने के लिए कहता है और भीम स्वतः जाना नहीं चाहते, उसे बलप्रयोग करके ले जाने को कहते हैं। बातचीत से भीम घटोत्कच को उसकी माँ हिडिंबा के नाम से पहचानते हैं मगर घटोत्कच भीम को नहीं पहचानता। बाप-बेटे में भयङ्कर युद्ध होता है। घटोत्कच मायापाश का भी प्रयोग करता है, भीम उसे छुड़ा लेते हैं। तब घटोत्कच वादे के अनुसार भीम से चलने के लिए कहता है। भीम उसके पीछे-पीछे जाते हैं। राक्षस की झोपड़ी के पास भीम बाहर खड़े होते हैं। हिडिम्बा बाहर आती है और भीम को पहचान लेती है। घटोत्कच चकित होकर पिता को प्रणाम करता है और भीम उसे आशीर्वाद देते हैं और वे सभी वृद्ध ब्राह्मण केशवदास से मिलते हैं। हिडिम्बा का मनुष्य ढूँढने का उद्देश्य भीम का पता लगाना ही था। सब आनन्द से विभोर हो जाते हैं और ब्राह्मण परिवार के साथ निकलते हैं। भरत वाक्य के साथ व्यायोग समाप्त होता है।

नामकरण

मध्यमव्यायोग का शीर्षक एकदम उपयुक्त एवं सारगर्भित है। इसकी उत्पत्ति इस प्रकार है—

(१) मध्यमस्य ब्राह्मणमध्यमपुत्रस्य राक्षसार्थं विमुक्तस्य पुनः परिवारेण सह व्यायोगः संयोगः।

(२) मध्यमस्य भीमस्य स्वपुत्रकलत्राभ्यां सह व्यायोगः संयोगः।

(३) मध्यमम् मध्यमपाण्डवम् भीमम् उद्दिश्य कृतो व्यायोगः रूपकविशेषः।

(४) मध्यमयोर्द्वयोः ब्राह्मणवटुभीमसेनयोर्व्यायोगः मेलनम्।

(५) मध्यमस्य भीमस्य व्यायोगः (व्यायुज्यते इति)। अथवा

(६) मध्यमस्य मध्यमब्राह्मणबटोर्व्यायुक्तिनिमित्तकम् रूपकम् इति च।

रूपक की समग्र कथा एक ओर मध्यम ब्राह्मण वटु, दूसरी ओर मध्यम पाण्डव के चारों ओर केन्द्रित होने के कारण इसका शीर्षक उपयुक्त है मध्यम नामक व्यायोगः।

पात्र

'मध्यमव्यायोग' के मुख्य पात्र हैं मध्यम ब्राह्मणवटु, मध्यम पाण्डव भीम, घटोत्कच, हिडिम्बा उनमें से प्रत्येक का चरित्र इस प्रकार है।

१. मध्यम ब्राह्मणवटु :—यह एक स्वाभाविक रूप से सरल प्रकृति का है। इसका चरित्र और गुण प्रशंसनीय हैं। यह उदार और त्यागी है। बन्धुओं की प्राणरक्षा के लिये अपने को सहर्ष त्याग करने में तत्पर है। यह उम्र से युवक है, लेकिन विद्या और बुद्धि से प्रौढ़ है। इसकी दृढ़ता स्तुत्य है। स्वयम् घटोत्कच इसे दृढ़व्यवसायिन्! कहकर सम्बोधन करता है। अपने बदले में भीम को जाने की बात उसे पसन्द नहीं है।

२. मध्यम पाण्डव भीम :—भीम इस व्यायोग के धीरोद्धत नायक हैं। वे अतिबलवान् हैं। उनको बल का गर्व है, लेकिन अकाले प्रयोग नहीं। वे एक त्यागी एवं संयमी पुरुष के रूप में हैं। वे अपने को एक आदर्श पिता का कर्तव्य निभाते हैं और पुत्र घटोत्कच के चापल्य को क्षमा देते हुए उसे

आशीर्वाद देते हैं। वे हिडिम्बा के एक आदर्श पति भी हैं, वे हिडिम्बा को देवी कहकर उसके गुणों की याद करते हैं। वे ब्राह्मण के लिये सब कुछ बलिदान करने को तत्पर हैं। उनका संयम एवं दृढ़ता प्रशंसनीय है।

३. घटोत्कच :—घटोत्कच राक्षसी के उदर से जन्मा भीम का पुत्र है। वह बल वीर्य से उन्मत्त है, लेकिन अमर्यादित नहीं। वह परम मातृभक्त है और सदाचार को मानता है। वह ब्राह्मण पुत्र को माता के लिये लेता है, अपने लिये नहीं। वह ब्राह्मण के पुत्र को लेता तो है मगर ब्राह्मण के साथ अभद्र व्यवहार नहीं करता। वह यथार्थवादी है और क्षमाशील भी, लड़के का नाम पूछने पर बहुत गुस्साते हैं, उसपर घटोत्कच क्षमा माँगता है और उसे अपना स्वभावगत दोष मानता है। वह भीम से युद्ध तो करता है लेकिन बाद में पहचानने पर क्षमायाचना भी करता है। वह गुरुजनों के प्रति निष्ठावान् है। माँ की आज्ञा पूरी करने के लिए वह अपने प्राणों से भी खेलता हैं।

४. हिडिम्बा :—हिडिम्बा एक सुसंस्कृत स्त्री है वह जाति से राक्षसी लेकिन गुणों से देवी है। वह ब्राह्मण अथवा वृद्ध को परेशान करना नहीं चाहती। उसका मनुष्य खोजवाने का उद्देश्य भीम से मिलना ही है न कि उसको खा जाना। वह एक आदर्श पत्नी और आदर्श माता भी है।

होलिकोत्स
वि० सं० २०४०

—लोकमणि दाहाल



भास-प्रशंसा

सूत्रधारकृतारम्भैर्नाटकैर्बहुभूमिकैः ।
सपताकैर्यशोलेभे भासो देवकुलैरिव ॥

(हर्षचरितम् १।१५)

भासनाटकचक्रेऽपि चछेकैः क्षिप्ते परीक्षितुम् ।
स्वप्नवासवदत्तस्य दाहकोऽभून्न पावकः ॥

(काव्यमीमांसा)

सुविभक्तमुखाद्यङ्गैर्व्यक्तलक्षणवृत्तिभिः ।
परतोऽपि स्थितो भासः शरीरैरिव नाटकैः ॥

(अवन्तीसुन्दरीकथा)

भासम्मि जलणमित्ते कन्तीदेवे अ जस्स रहुआरे ।
सोबन्धवे अ बन्धम्मि हारियन्दे अ आणन्दो ॥

(गउड बहो, गाथा ८००)

(भासे ज्वलनमित्रे कुन्तीदेवे च यस्य रघुकारे ।
सौबन्धवे च बन्धे हारिचन्द्रे च आनन्दः ॥)

प्रथितयशसां भाससौमिल्लककविपुत्रादीनां प्रबन्धानतिक्रम्य कथं वर्तमानस्य कवेः कालिदासस्य कृतौ बहुमानः ।

(मालविकाग्निमित्रम्)

यथा भासकृते स्वप्नवासवदत्ते शेफालिकाशिलातलमवलोक्य वत्सराजः ।

(नाट्यदर्पणम्)

भासो हासः कविकुलगुरुः कालिदासो विलासः ।

(प्रसन्नराघवकार : जयदेव)

सत्काव्यसंहारविधौ खलानां दीप्तानि वह्नेरपि मानसानि।
भासस्य काव्यं खलु विष्णुधर्मं सोऽप्याननात्पारदवन्मुमोच ॥
(पृथ्वीराजविजय : जयानक)

महाकविना भासेनाऽपि स्वप्रबन्धे उक्तम्—

त्रेतायुगं तदिह हन्त न मैथिलीसा
रामस्य रागपदवी मृदु चास्य चेतः।
लब्धा जनस्य यदि रावणमस्य
कायं प्रोत्कृत्य तन्न तिलशो न वितृप्तिगामी ॥
(अभिनवभारती)

भासो रामिलसौमिलौ वररुचिः श्रीसाहसाङ्कः कवि-
र्मेण्ठी भारविकालिदासतरला स्कन्धः सुबन्धुश्च यः।
दण्डीबाणदिवाकरौ गणपतिः कान्तश्च रत्नाकरः
सिद्धा यस्य सरस्वती भगवती के तस्य सर्वे वयम् ॥

कारणं तु कवित्वस्य न सम्पन्नकुलीनता।
धावकोऽपि हि यद्भासः कवीनामग्रिमोऽभवत् ॥
(कवि विमर्शः)

पात्रपरिचयः

पुरुषाः—

वृद्धः—ब्राह्मणः केशवदासनामा ।

प्रथमः—वृद्धस्य ज्येष्ठः पुत्रः ।

द्वितीयः—वृद्धस्य द्वितीयः पुत्रः मध्यमनामा ।

तृतीयः—वृद्धस्य कनिष्ठः पुत्रः ।

घटोत्कचः—हिडिम्बाभीमसेनयोः सुतः ।

भीमसेनः—पञ्चपाण्डवेषु मध्यमः कुन्तीपुत्रः ।

स्त्रियः—

ब्राह्मणी—वृद्धस्य भार्या ।

हिडिम्बा—राक्षसी, भीमसेनस्य पत्नी ।



महाकविभासनाटकचक्रे

मध्यमव्यायोगः

'कला-प्रतिकला' संस्कृत-हिन्दीव्याख्योपेतः

प्रथमोऽङ्कः

(नान्द्यन्ते ततः प्रविशति सूत्रधारः ।)

(कला)

प्रणम्य भारतीं भक्त्या वाग्रूपामविनाशिनीम् ।
भासमध्यमव्यायोगविवृतिं प्रकरोम्यहम् ॥ १ ॥
भासरूपकचक्रेऽसौ यथा बुधजनप्रियः ।
तथैवैसाऽखिला व्याख्या भूयादिति नुतिर्मम ॥ २ ॥

अथ तत्रभवान् कविकुलभास्वरो भासो मध्यमव्यायोगाख्यं रूपकविशेषं चिकीर्षुः "पूर्वरङ्गं विधायादौ सूत्रधारे विनिर्गते । प्रविश्य तद्वदपरः काव्यमास्थापयेन्नटः" "अत्र पूर्वः पूर्वरङ्गः" इत्यादिप्रमाणेन पूर्वरङ्गाङ्गीभूतायाः नान्द्याः अनन्तरं सूत्रधारप्रवेशं सूचयति--नान्द्यन्त इति । नान्द्यन्ते= नन्दयति (आनन्दयति जनान्) इति नान्दति अथवा नदन्ति देवता अस्यामनया वेति नान्दी, आशीःप्रतिपादनपरा देवस्तुतिर्वा (आदौ मङ्गलार्थं पद्यम्)। तस्याः अन्ते (अवसाने), ततः=तदनन्तरं (नान्दीपाठानन्तरम्), सूत्रधारः= सूत्रम् (नाट्यवस्तुनः प्रयोगानुष्ठानम्) धारयतीति सूत्रधारः (प्रधाननटः); प्रविशति=रङ्गमञ्चे आत्मानमुपस्थापयति इति ।

नान्दीलक्षणन्तु--आशीर्वचनसंयुक्ता स्तुतिर्यस्मात्प्रयुज्यते ।
देवद्विजनृपादीनां तस्मान्नान्दीति संज्ञिता ॥

(प्रतिकला)

(मङ्गल गान के बाद रङ्गमञ्च पर सूत्रधार आता है ।)

सूत्रधारः—

पायात्स वोऽसुरवधूहृदयावसादः
पादो हरेः कुवलयामलखड्गनीलः।
यः प्रोद्यतस्त्रिभुवनक्रमणे रराज
वैदूर्यसंक्रम इवाम्बरसागरस्य ॥ १ ॥

नाटकस्य पूर्वरङ्गाङ्गभूता नान्दी। पूर्वरङ्गलक्षणन्तु—

यन्नाट्यवस्तुनः पूर्वं रङ्गविघ्नोपशान्तये।
कुशीलवाः प्रकुर्वन्ति पूर्वरङ्गः स उच्यते॥

पूर्वं रज्यतेऽस्मिन्निति पूर्वरङ्गः। पूर्वरङ्गप्रधानाङ्गत्वेन नान्द्या अनिवार्यता। उक्तञ्च—

प्रत्याहारादिकान्यङ्गान्यस्य भूयांसि यद्यपि।
तथाप्यवश्यं कर्तव्यं नान्दी विघ्नोपशान्तये॥

सूत्रधारलक्षणम्—नाट्योपकरणादीनि सूत्रमित्यभिधीयते।
सूत्रं धारयति ह्यस्मात् सूत्रधारः प्रकथ्यते॥

अपरञ्च— नाट्यस्य यदनुष्ठानं तत्सूत्रं स्यात्सबीजकम्।
रङ्गदैवतपूजाकृत् सूत्रधारः उदीरितः॥

सूत्रधारद्वारैव नान्दीपाठः आवश्यकः। यथाह भरतः—

सूत्रधारः पठेन्नान्दीं मध्यमं स्वरमास्थितः।

अभिनेये रूपके निर्दिष्टक्रमो यथा—

तत्र पूर्वं पूर्वरङ्गः समापूजा ततः परम्।
कथनं कविसंज्ञादेर्नाटकस्याप्यथामुखम्॥

पायादिति—हरेः स पादः वः पायात् यः असुरवधूहृदयावसादः कुवलयामलखड्गनीलः त्रिभुवनक्रमणे प्रोद्यतः अम्बरसागरस्य वैदूर्यसङ्क्रमः इव रराज इत्यन्वयः।

सूत्रधार—भगवान् वामन का वह प्रसिद्ध पैर आप सब की रक्षा करे जो दुष्ट जन का नाश कर के असुरों की पत्नियों के हृदय में कष्ट पहुँचाने वाला नील कमल के समान निर्मल एवं खड्ग के समान श्याम वर्ण, तीनों

हरेः=वामनरूपधारिणो विष्णोः, सः=विख्यातः, पादः=चरणः, वः= युष्मान्, पायात्=रक्षतात्, य=पादः असुरवधूहृदयावसादः=असुराणाम् (देवविरोधिनाम्) वध्वः (स्त्रियः) "नारी सीमन्तिनी वधू" इत्यमरः, तासां हृदयानि (मनांसि) "चित्तं तु चेतो हृदयं स्वान्तं हृन्मानसं मनः" इत्यमरः, तेषाम् अवसादः (दुःखप्रद इति भावः) प्रियजनविनाशेन असुरनारीमनोविषादप्रदः इत्यर्थः, कुवलयामलखड्गनीलः= कुवलयवत् (उत्पलवत्) 'स्यादुत्पलं कुवलयम्' इत्यमरः, अमलः (मलरहितः), चासौ खड्गः (असिः) तद्वत् नीलः (श्यामः) अथवा कुवलयम् (उत्पलम्) अमलखड्गः (मलरहितोसिः), तद्वत् नीलः (नीलवर्णः), त्रिभुवनक्रमणे= त्रयाणाम् (त्रिसंख्याकानाम्), भुवनानाम् (जगताम्) 'विष्टपं भुवनं जगत्' इत्यमरः, समाहारः तस्य क्रमणम् (मानम्) तस्मिन् वलिनिग्रहार्थं त्रिलोक- माने क्रियमाणे इत्यर्थः, प्रोद्यतः=ऊर्ध्वलोकमानाय नितान्तमुद्धृतः सन्, अम्बर- सागरस्य=अम्बरम् (व्योम) 'व्योम पुष्करमम्बरम्' इत्यमरः, एव सागरः (अर्णवः) 'सरस्वान् सागरोऽर्णवः' इत्यमरः; तस्य, वैदूर्यसङ्क्रमः=वैदूर्येण (नीलवर्णमणिना) निर्मितः यः सङ्क्रमः (दुर्गसंञ्चरः, सेतुः) 'सङ्क्रमो दुर्गसञ्चरः इत्यमरः, इव रराज=शोभां लेभे । अस्मिन् पद्ये 'कुवलयामलखड्ग- नीलः' इत्यत्र लुप्तोपमालङ्कारः । तल्लक्षणञ्चेत्थम्—

वर्ण्योपमानधर्म्याणामुपमावाचकस्य च ।
एकद्वित्र्यनुपदानैर्भिन्ना लुप्तोपमा ॥

'अम्बरसागरस्य' इत्यत्र रूपकालङ्कारः, लक्षणन्तु—

'विषय्यभेदताद्रूप्यरञ्जनं विषयस्य यत् ।
रूपकम्''' ॥

वैदूर्यसङ्क्रम इव' इत्यत्र उत्प्रेक्षालङ्कारः । लक्षणं यथा—

उत्प्रेक्षोन्नीयते यत्र हेत्वादि निह्नुतिं विना ।

अथवा—

भवेत्सम्भावनोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य परात्मना ॥

लोकों को मापने के लिए उठाया गया, आकाशरूप समुद्र मे वैदूर्य मणि द्वारा बनाए गए पूल के समान शोभायमान था ॥ १ ॥

एवमार्यमिश्रान्विज्ञापयामि। अये किं नु खलु मयि विज्ञापनव्यग्रे शब्द इव श्रूयते। अङ्ग पश्यामि।

(नेपथ्ये)

भोस्तात! को नु खल्वेषः।

सूत्रधारः—भवतु, विज्ञातम्।

पद्येऽस्मिन् वसन्ततिलकावृत्तम्। तल्लक्षणन्तु—

'उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः'॥ १॥

एवमिति—एवम्=अनेन वक्ष्यमाणप्रकारेण, आर्यमिश्रान्=आर्यश्च मिश्राश्च तान् माननीयसामाजिकान्, 'आर्यस्तु मारिषः' इत्यमरः, "महाकुल-कुलीनार्यसभ्यसज्जनसाधवः' इत्यपि, विज्ञापयामि=निवेदयामि। अये= आश्चर्यम् विषादो वा, किन्नु खलु=किं निमित्तम्, मयि=सूत्रधारे इत्यर्थः, विज्ञापनव्यग्रे=विषयवस्तुज्ञापनार्थमाकुलचित्ते 'व्यग्रो व्यासक्त आकुलः' इत्यमरः, शब्द इव=किञ्चित् अस्फुटशब्दवत् 'न वा यथा तथैवेवं साम्ये' इत्यमरः, श्रूयते=आकर्ण्यते, अङ्ग=अवश्यमेव, अथवा सम्भ्रमे सम्बोधनम् 'स्युः प्याट् पाडङ्ग है हे भो' इत्यमरः, पश्यामि=कुतोऽयं शब्द इति जानामि।

नेपथ्ये=जवनिकान्तर्भागे 'आकल्पवेषौ नेपथ्यम्' इत्यमरः, नटादि-शृङ्गारप्रसाधनभागे इत्यर्थः, भोस्तात=हे पितः, एषः=विषादकारणीभूतः पुरुषविशेषः; को नु खलु=कोऽस्ति।

भवतु इति—भवतु विज्ञातम्=मया ज्ञातमेतत् कस्यायं शब्द इति किमर्थमयमिति च यत्—

भो इति—अस्य भोः शब्दोच्चारणात् अयम् ब्राह्मणः न संशयः (एष)

आप सब पूजनीय सभासदों को मैं यह निवेदन करता हूं। ओह! मैं जब निवेदन करने लगा तो यह कैसी आवाज सुनाई पड़ रही है। अच्छा! देख ही लूं।

(नेपथ्य में, पर्दे के पीछे)

पिताजी, यह कौन है?

सूत्रधार—ठीक, ठीक, मैं समझ गया।

भोः शब्दोच्चारणादस्य ब्राह्मणोऽयं न संशयः।
त्रास्यते निर्विशङ्केन केनचित्पापचेतसा ॥ २ ॥

(पुनर्नेपथ्ये)

भोस्तात ! को नु खल्वेषः।

सूत्रधारः—हन्त दृढं विज्ञातम्। एष खलु पाण्डवमध्यमस्यात्मजो

केनचित् निर्विशङ्केन पापचेतसा त्रास्यते इत्यन्वयः।

अस्य=शब्दङ्कुर्वतः पुरुषस्य, भोःशब्दोच्चारणात्=भो इत्येतस्य सम्बुद्धौ बहुधा ब्राह्मणद्वारा प्रयोज्यमानस्य सम्बोधनार्थकस्य शब्दस्य उच्चारणम् (कथनम्) तस्मात्, अयम्=शब्दकारी पुरुषः, ब्राह्मणः=ब्रह्मकुलसम्भवः, न संशयः=न सन्देहः 'विचिकित्सा तु संशयः। सन्देहद्वापरौ इत्यमरः, सम्बोधने भोः शब्दप्रयोगेण ज्ञायते यदयं शब्दकारी पुरुषः ब्राह्मणः इत्यभिप्रायः, (एषः ब्राह्मणः) केनचित्=अज्ञातेन जन्तुविशेषेण, निर्विशङ्केन=निर्गता (अपगता) विशङ्का (भयम्) यस्य स तेन, पापचेतसा=पापम् (अभद्रम्), चेतः (हृदयम्) यस्य तेन, त्रास्यते=भीष्यते, यस्मादयं शब्दङ्करोति इति। भोः शब्दग्रहणेन अनेन ब्राह्मणेन भवितव्यम्। अवश्यमेव एष केनापि दुष्टहृदयेन जन्तुविशेषेण भीष्यते इति भावः। छन्दोऽत्रानुष्टुप्, लक्षणन्तु—

श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं सर्वत्र लघु पञ्चमम्।
द्विचतुष्पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः ॥ २ ॥

हन्तेति—हन्त=विषादोऽयम् 'हन्त हर्षेऽनुकम्पायां वाक्यारम्भविषादयोः' इत्यमरः, 'हन्त दानेऽनुकम्पायां वाक्यारम्भविषादयोः' इति हैमः, 'हन्त वाक्यारम्भखेदविषादहर्षसम्भ्रमे' इति मेदिनी, दृढम्=निश्चयमेव 'दृढं स्थूले

इसके भोः शब्द के कहने से यह ज्ञात होता है कि यह ब्राह्मण है, इसमें कोई सन्देह नहीं। यह बेचारा ब्राह्मण किसी खराब अभिप्राय के नीडर जन्तु विशेष द्वारा डराया, सताया जा रहा है ॥ २ ॥

(फिर नेपथ्य में)

हे पिताजी, यह कौन है ?

सूत्रधार—ओह, मैं अब समझ गया हूं। निश्चय ही पाण्डु के मझले

हिडिम्बारणिसंभूतो राक्षसाग्निरकृतवैरं ब्राह्मणजनं वित्रासयति। भोः कष्टम्। अत्र हि—

श्रान्तैः सुतैः परिवृतस्तरुणैः सदारै-
वृद्धो द्विजो निशिचरानुचरः स एषः।

नितान्ते च प्रगाढबलवत्यपि' इति मेदिनी, विज्ञातम्=शब्दकारणमवगत-मिति। किञ्च एष=निर्दिष्टः, खलु=निश्चयमेव 'निषेधवाक्यालङ्कारजिज्ञासानुनये खलु' इत्यमरः, पाण्डवमध्यमस्य=पाण्डवेषु (पाण्डुसुतेषु युधिष्ठिरादिषु पञ्चसु) मध्यमः (द्वितीयो भीमसेनः युधिष्ठिरादवरेषु प्राथम्यात् अत्र मध्यमशब्देन भीमो गृह्यते) तस्य आत्मजः=पुत्रः 'आत्मजस्तनयः सूनुः सुतः पुत्रः' इत्यमरः, हिडिम्बारणिसम्भूतः=हिडिम्बा (तन्नाम्नी राक्षसी भीमसेनस्य पत्नीभूता) एव अरणिः (अग्निमन्थनकाष्ठविशेषः) "अरणिर्वह्नि-मन्थे ना द्वयोर्निर्मन्थ्यदारुणि" इति मेदिनी, तस्याः सम्भूतः (जातः) स, राक्षसाग्निः=राक्षसः (घटोत्कचनामा राक्षसः) एव अग्निः (वह्निः) अग्निर्वैश्वानरो वह्निः' इत्यमरः, अकृतवैरम्=न कृतम् अकृतम् (अविहितम्) वैरम् (विरोधः) वैरं विरोधो विद्वेषः' इत्यमरः, यस्य स तम् अविहितविरोधं निष्पापम्, ब्राह्मणजनम्=विप्रम्, वित्रासयति=त्रासमुत्पादयति। भोः कष्टम् खलु=अतीवकष्टप्रदमिदम्, पत्नीसुतपरिवृतस्य पत्नी (सहधर्मिणी) 'पत्नी पाणिगृहीती च द्वितीया सहधर्मिणी' इत्यमरः, च सुताः (पुत्राः) च तैः परिवृतस्य=सहितस्य स्त्रीपुत्रयुतस्य, ब्राह्मणस्य=विप्रस्य, वृत्तान्तः=वार्ता "वृत्तान्तस्तु प्रकरणे कार्त्स्न्ये वार्ताप्रकारयोः" इत्यमरः। अत्र हि=किञ्च।

श्रान्तैरिति—तरुणैः श्रान्तैः सुतैः परिवृतः सदारः निशिचरानुचरः

लड़के भीमसेन का लड़का हिडिम्बा रूप अरणि (आग निकालने के लिए रगड़े जाने का काठ) से निकला यह राक्षसरूप आग अर्थात् घटोत्कच किसी से दुश्मनी न करने वाले ब्राह्मण परिवार को परेशान कर रहा है। ओह! पत्नी एवं पुत्रों से युक्त ब्राह्मण की दशा अत्यन्त कष्टपूर्ण है। यहाँ—

जंगली रास्ते में चलने से अत्यन्त थके हुए, किशोर वय के पुत्रों एवं पत्नी के सहित, राक्षस से पीछा किए गए ये बूढ़े ब्राह्मण डर से काँपता हुआ;

व्याघ्रानुसारचकितो वृषभः सधेनुः
सन्त्रस्तवत्सक इवाकुलतामुपैति ॥ ३ ॥

(निष्क्रान्ताः ।)

एष स वृद्धः द्विजः सन्त्रस्तवत्सकः सधेनुः व्याघ्रानुसारचकितः वृषभः इव आकुलताम् उपैति इत्यन्वयः ।

तरुणैः=युवभिः प्रथमवयस्थैः "वयस्यस्तरुणो युवा" इत्यमरः, श्रान्तैः=मार्गसञ्चारखिन्नैः, सुतैः=पुत्रैः, कर्तृकरणयोस्तृतीया, परिवृतः=परिवेष्टितः सहित इत्यर्थः, सदारः=सपत्नीकः वृद्धः=स्थविरः 'प्रवयाः स्थविरो वृद्धः' इत्यमरः, निशिचरानुचरः=निशि (रात्रौ) चरति (भ्रमति) इति निशिचरः (राक्षसः) अनुचरः (अनु पश्चात् चरति गच्छति इति अनुचरः (अनुयायी) यस्य स राक्षसेनानुगम्यमानः इत्यर्थः, एष स द्विजः=ब्राह्मणः 'दन्ताः विप्राण्डजाः द्विजाः' इत्यमरः, सन्त्रस्तवत्सकः=सन्त्रस्तः (भीतः) वत्सको यस्य स, व्याघ्रानुसारचकितः=व्याघ्रस्य (शार्दूलस्य) 'शार्दूलद्वीपिनौ व्याघ्रे' इत्यमरः, अनुसारः (अनुसरणम) पश्चाद्गमनम्, तेन चकितः (त्रस्तः) शार्दूलानुगमनभीतः इत्यर्थः, सधनुः=धेन्वा (नवसूतिकया गवा) 'धेनुः स्यान्नवसूतिका' इत्यमरः, सहितः, वृषभः=वलीवर्दः 'उक्षा भद्रो वलीवर्दः ऋषभो वृषभो वृषः' इत्यमरः, इव आकुलताम्=उद्विग्नावस्थाम्, उपैति=प्राप्नोति आकुलोऽस्ति इत्यर्थः । अत्र ब्राह्मणवृषभयोः समानावस्थावर्णनेन उपमालङ्कारः तल्लक्षणन्तु "उपमा यत्र सादृश्यलक्ष्मीरुल्लसति द्वयोः ।" पद्येऽस्मिन् वसन्ततिलकावृत्तम् । लक्षणन्तु—उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः ॥ ३ ॥

निष्क्रान्तः=सूत्रधारो निर्गतः, स्थापना=प्रस्तावना, काव्यार्थस्थापनक्रिया । पूर्वरङ्गविधानमात्रं सूत्रधारस्य कर्म काव्यस्थापनक्रिया तु स्थापकस्य अपरनटस्य । उक्तञ्च—

पूर्वरङ्गं विधायादौ सूत्रधारे विनिर्गते ।
प्रविश्य तद्वदपरः काव्यमास्थापयेन्नटः ॥"

बछड़ा एवं गाय के सहित, बाघ से पीछा किया गाय बैल के समान आकुल हो गए हैं ॥ ३ ॥

(निकल जाता है)

स्थापना

(ततः प्रविशति सुतत्रयकलत्रपरिवृतो ब्राह्मणः पृष्ठतो घटोत्कचश्च ।)

ब्राह्मणः—भोः को नु खल्वेषः ।

किन्तु भासस्तु अपरनटकर्मापि सूत्रधारेणैव कारितवान्। साहित्यदर्पणेऽप्युक्तम् ।

"पूर्वरङ्गं विधायैव सूत्रधारे विनिर्गते ।
प्रविश्य स्थापकस्तद्वत् काव्यमास्थापयेत्ततः ॥

स हि—

सूचयेत् वस्तु बीजं वा मुखं पात्रमथापि वा ।

स्थापनालक्षणन्तु—

नटी विदूषको वापि पारिपार्श्विक एव वा ।
सूत्रधारेण सहिताः संलापं यत्र कुर्वते ।
चित्रैर्वाक्यैः स्वकार्योत्थैः प्रस्तुताक्षेपिभिर्मिथः ।
आमुखं तत्तु विज्ञेयं नाम्ना प्रस्तावनाऽपि सा ॥ सा० द० ६·३१·३२ ।

ततः इति—ततः=स्थापनानन्तरम्, सुतत्रयकलत्रवृतः=सुतानाम् (पुत्राणाम्) त्रयम् तच्च कलत्रम् (पत्नी) च तैः परिवृतः (परिवेष्टितः), वृद्धः=गलितवयस्कः, ब्राह्मणः=द्विज, प्रविशति=रङ्गमायाति, पृष्ठतः=पश्चात् अनुगम्यमानः इत्यभिप्रायः, घटोत्कचः=तन्नामा भीमसेनस्य हिडिम्बायाम् जातः राक्षसपुत्रः, च=अपि ।

तरुणेति—तरुणरविकरप्रकीर्णकेशः भ्रुकुटिपुटोज्ज्वलपिङ्गलायताक्षः सकण्ठसूत्रः सतडित् घनः इव युगनिधने हरस्य प्रतिमाकृतिः इत्यन्वयः ।

(स्थापना)

उसके बाद तीन लड़कों एवं पत्नी के साथ बूढ़े ब्राह्मण रङ्गमञ्च पर प्रवेश करते हैं और उनका पीछा करता हुआ घटोत्कच भी ।

तरुणरविकरप्रकीर्णकेशो
भ्रुकुटिपुटोज्ज्वलपिङ्गलायताक्षः ।
सतडिदिव घनः सकण्ठसूत्रो
युगनिधने प्रतिमाकृतिर्हरस्य ॥ ४ ॥

प्रथमः—भोस्तात ! को नु खल्वेषः ।

तरुणरविकरप्रकीर्णकेशः=तरुणः (नूतनः) चासौ रविः (सूर्यः) 'तपनः सविता रविः' इत्यमरः, तस्य कराः (किरणाः) 'भानुः करो मरीचिः स्त्री' इत्यमरः, इव प्रकीर्णाः (विस्तारिताः असंयतप्रसाराः), केशाः (मूर्द्धजाः) यस्य सः उदीयमानसूर्यकिरणवत् विस्तीर्णमूर्द्धजः ।

भ्रुकुटीति=भ्रुकुटिः (भ्रूकुटिः) 'भ्रुकुटिः भ्रूकुटिःस्त्रियाम्' इत्यमरः, तस्याः पुटः (भङ्गी) तेन उज्वले (प्रदीप्ते) पिङ्गले (कपिशे) आयते (दीर्घे) अक्षिणी (नेत्रे) यस्य स भ्रूकुटिभङ्गेन प्रोज्वलकपिशदीर्घनेत्रः, सकण्ठसूत्रः=कण्ठसूत्रेण (कण्ठालङ्कारविशेषेण) सहितः, संतडित्=तडित् (विद्युत्) 'तडित् सौदामनी विद्युत् 'इत्यमरः, तया सहितः (युतः), घनः=मेघः 'घनजीमूतमुदिरजलमुग्धूमयोनयः' इत्यमरः, इव (स्थितः इति), युगनिधने=युगात्यये (प्रवृत्तस्य) हरस्य=संहारकरस्य रुद्रस्य, प्रतिमाकृतिः=भयङ्करत्वात् प्रतिकृतिस्वरूपः (एषः कः)। पद्येऽस्मिन् रविकरराक्षसकेशयोः प्रकीर्णतासमत्ववर्णनेन सतडिन्मेघराक्षसवर्णसाम्यत्ववर्णनेन च उपमालङ्कारः । लक्षणं पूर्वमेवोक्तम् । वृत्तन्तु पुष्पिताग्रा । लक्षणन्तु—अयुजि नयुगरेफतो यकारो युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा ॥ ४ ॥

वृद्ध—अरे ! यह कौन है जो—

उगते हुए सूर्य के किरणों के समान बिखरे बालों वाला, भ्रूकुटि की भंगी से तेज पीले रङ्ग की लम्बी-लम्बी आँखों वाला, गले में सूत्र पहना हुआ बिजली से युक्त मेघ के समान, युग के संहार करने में लगे भगवान् रुद्र की आकृति के समान है। ४ ॥

पहला (लड़का)—हे पिताजी ! वास्तव में यह कौन है ? जो—

सूर्य चन्द्र के किरण के समान चमकती आखों वाला, बड़ी और चोड़ी

ग्रहयुगलनिभाक्षः पीनविस्तीर्णवक्षाः
कनककपिलकेशः पीतकौशेयवासाः ।
तिमिरनिवहवर्णः पाण्डरोद्वृत्तदंष्ट्रो
नव इव जलगर्भो लीयमानेन्दुलेखः ॥ ५ ॥

ग्रहेति—ग्रहयुगलनिभाक्षः पीनविस्तीर्णवक्षाः कनककपिलकेशः पीतकौशेयवासाः तिमिरनिवहवर्णः पाण्डरोद्वृत्तद्रंष्ट्रः लीयमानेन्दुलेखः नवजलगर्भ इव (अस्ति) इत्यन्वयः ।

ग्रहयुगलनिमाक्षः—ग्रहयोः (चन्द्रसूर्ययोः) युगलम् (युग्मम्) तेन निभे (तुल्ये) अक्षिणी (लोचने) यस्य सः सूर्यचन्द्रवत्प्रदीप्तनयनः, पीनेति=पीनम् (स्थूलम्) 'पीनं स्थूलपीवरे' इत्यमरः, यथा स्यात्तथा विस्तीर्णम् (विस्तृतम्) वक्षः (उरः) 'उरो वत्सं च वक्षश्च' इत्यमरः, यस्य स स्थूलविस्तृतोरस्कः, कनकेति=कनकम् (स्वर्णम्) 'स्वर्णं सुवर्णं कनकं हिरण्यं हेम हाटकम्' इत्यमरः, इव कपिलाः (पिशङ्गाः) 'कडार कपिलः पिङ्गपिशङ्गौ कद्रुपिङ्गलौ' इत्यमरः, केशाः (कचाः)' कचः केशः शिरोरुहः' इत्यमरः, यस्य स कपिलकचः, पीतेति=पीतम् (पीतवर्णम्) कौशेयवासः (क्षौमवस्त्रम्) यस्य स पीताम्बरावृतः, तिमिरेति=तिमिरः (अन्धकारः) 'तमिस्रं तिमिरं तमः' इत्यमरः, तस्य निवहः (समूहः) 'समूहो निवहव्यूहसन्दोहविसरव्रजाः' इत्यमरः तस्य वर्ण इव वर्णो यस्य सः अतीवकृष्णः, पाण्डरेति=पाण्डरे (शुक्ले) 'शुक्लशुभ्रशुचिश्वेतविशदश्येतपाण्डराः' इत्यमरः, यथा स्यात्तथा उद्वृते (उत्क्षिप्ते) द्रंष्ट्रे (राजदन्तपार्श्वस्थदन्तविशेषौ) यस्य उत्क्षिप्तशुभ्रद्रंष्ट्रः, लीयमानेति=लीयमाना (अन्तर्भूता) इन्दुलेखा (चन्द्रिका) यस्मिन् स संश्लिष्यच्चन्द्रलेखः, नवः=नूतनः, जलगर्भः=जलम् (वारि) गर्भे (अन्तः) यस्य स जलवर्षोत्सुको मेघः इव अस्तीति शेषः ॥ ५ ॥

छाती वाला, सोने के समान पीले केशों वाला, पीला रेशमी वस्त्र पहना हुआ, अन्धकार के समान काले वर्ण वाला यह बाहर निकले हुए सफेद दाँत होने से चाँदनी छिपे हुए काले मेघ के समान लगता है ॥ ५ ॥

द्वितीयः—क एष भोः !

कलभदशनदंष्ट्रो लाङ्गलाकारनासः
कविवरकरबाहुर्नीलजीमूतवर्णः ।
हुतहुतवहदीप्तो यः स्थितो भाति भीमः
स्त्रिपुरपुरनिहन्तुः शङ्करस्येव रोषः ॥ ६ ॥

कलभेति—कलमदशनदंष्ट्रः लाङ्गलाकारनासः करिवरकरबाहुः नील-जीमूतवर्णः हुतहुतवहदीप्तः भीमः स्थितः यः त्रिपुरपुरनिहन्तुः शङ्करस्य रोषः इव भाति इत्यन्वयः ।

कलमदशनदंष्ट्रः—कलमः (करिशावकः) 'कलमः करिशावकः' इत्यमरः, तस्य दशनौ (दन्तौ) 'रदनाः रशनाः दन्ताः' इत्यमरः, इव दंष्ट्रे यस्य स, लाङ्गलेति=लाङ्गलम् (हलम्) 'लाङ्गलं हलम्' इत्यमरः, तस्य आकारः (आकृतिः) यस्याः सा लाङ्गलाकारा नासिका (घ्राणेन्द्रियम्) यस्य स हलाकारः बक्राग्रनासिकः, करीति=करी (हस्ती) 'कुञ्जरो वारणः करी' इत्यमरः, तेषाम् वरः (श्रेष्ठः) तस्य करः (शुण्डः) इव बाहू (भुजौ) 'भुजबाहु-प्रवेष्टो दोः' इत्यमरः, यस्य स, नीलजीमूतवर्णः=नीलः (नवीनः) चासौ जीमूतः (घनः) 'घनजीमूतमुदिरः' इत्यमरः, तस्य वर्णं इव वर्णो यस्य स (एषः कोऽस्ति ?) यः हुतहुतवहदीप्तः=हुतः (दत्तहविः) चासौ हुतवहः (अग्निः) इव दीप्तः (उज्वलः) तथोक्तः, अत एव भीमः=भयङ्करः, स्थितः=अस्तीत्यर्थः, यः पुरुषः, त्रिपुरेति=त्रिपुरस्य (तन्नाम्नोऽसुरस्य) पुरम् (नगरम्) तस्य निहन्ता (नाशनः) तस्य, शङ्करस्य=रुद्रस्य, रोषः (कोपः) 'कोप-क्रोधामर्षरोषप्रतिघा' इत्यमरः, भाति=शोभां लभते ।

पद्येऽस्मिन्नुपमालङ्कारः । वृत्तन्तु मालिनी । लक्षणन्तु-न न म य य युतेयं मालिनी भोगिलोकैः ॥ ६ ॥

दूसरा (लड़का)—अरे ! यह है कौन ? जो—हाथी के बच्चे के दाँतो के समान दाँतों वाला, हल के आकार के समान टेढे नाक वाला, मत्त हाथी के सूँड के समान बाहों वाला तथा हवन की गई आग के समान जलता सा यह भयङ्कर पुरुष कौन है ? जो त्रिपुरपुर (पक्षान्तर में शरीर भी) को नाश करने में तत्पर भगवान् रुद्र के भयङ्कर क्रोध उपस्थित हुआ सा लगता है ।

तृतीयः--भोस्तात ! को नु खल्वयमस्मान्पीडयति ।

वज्रपातोऽचलेन्द्राणां श्येनः सर्वपतत्रिणाम् ।
मृगेन्द्रो मृगसंघानां मृत्युः पुरुषविग्रहः ॥ ७ ॥

ब्राह्मणी--अय्य को एसो अम्हाअं सन्दावेइ [आर्य ! क एषोऽस्मान् सन्तापयति ।]

घटोत्कचः--भो ब्राह्मण ! तिष्ठ तिष्ठ ।

वज्रेति--अचलेन्द्राणाम् वज्रपातः सर्वपतत्रिणाम् श्येनः मृगसङ्घानाम् मृगेन्द्रः पुरुषविग्रहः मृत्युः (एष कः) इत्यन्वयः ।

अचलेन्द्राणाम्=पर्वतानाम्, कृते वज्रपातः=वज्रस्य (कुलिशस्य) पातः (आघातः) यथा पर्वतपक्षच्छेदनाय कुलिशः समर्थः तस्मात्तेषां कष्टप्रदः इत्यर्थः, सर्वेति=सर्वे (अखिले) च ते पतत्रिणः (पक्षिणः) 'पतत्रिपत्रि-पतगपतत्पत्ररथाण्डजाः' इत्यमरः, तेषां खगमात्राणां कृते श्येनः (पत्री, घातकः पक्षिविशेषः), मृगसङ्घानाम्=मृगाणाम् (पशूनाम्) सङ्घम् (समूहम्) तेषाम् कृते मृगेन्द्रः=सिंहः 'सिंहो मृगेन्द्रः पञ्चास्यः' इत्यमरः, पुरुषविग्रहः=पुरुषः (नरः) तस्य इव विग्रहः (शरीरम्) यस्य स नररूपधारी, मृत्युः=कालः (एव अयम्) ।

पद्येऽस्मिन् रूपकालङ्कारः । लक्षणन्तु--"रूपारोपात्तु रूपकम्" छन्दोऽत्रा-नुष्टुप् । लक्षणं पूर्वमेवोक्तम् ॥ ७ ॥

एष इति--एषः=अग्रेस्थितः कः, यः अस्मान् सन्तापयति=सन्तप्तान् करोति ।

तीसरा (लड़का)--अरे ? यह है कौन ? जो हमलोगों को सता रहा है । यह जो--

पहाड़ों के लिए वज्र, पञ्छियों के लिए बाज, पशुओं के लिए सिंह और शरीरधारी के रूप में यमराज (जैसा है) ॥ ७ ॥

ब्राह्मणी--आर्य ! यह है कौन जो हम लोगों को इस तरह परेशान कर रहा है ।

घटोत्कच--हे ब्राह्मण ! ठहरो ! ठहरो, रुक जाओ--

किं यासि मद्भयविनाशितधैर्यसारो
वित्रस्तदारसुतरक्षणहीनशक्ते !
तार्क्ष्याग्रपक्षपवनोद्धतरोषवह्नि-
स्तीव्रः कलत्रसहितो भुजगो यथार्त्तः ॥ ८ ॥

भो ब्राह्मण ! न गन्तव्यं न गन्तव्यम् ।

किं यासीति—(हे) वित्रस्तदारसुतरक्षणहीनशक्ते ! तार्क्ष्याग्रपक्षपवनोद्धतरोषवह्निः तीव्रः कलत्रसहितः आर्तः भुजगः यथा मद्भयविनाशितधैर्यसारः (सन्) किम् यासि इत्यन्वयः ।

वित्रस्तेति=वित्रस्ताः (अतीव भीताः) दाराः (पत्नी) सुताः (पुत्राः) च तेषाम् रक्षणे (पालने अभयप्रदाने) हीना (क्षीणा) शक्तिः (सामर्थ्यम्) यस्य तत्सम्बुद्धौ, तार्क्ष्येति=तार्क्ष्यः (गरुडः) "गरुत्मान् गरुडस्तार्क्ष्य." इत्यमरः, तस्य अग्रः (अग्रभागस्थितः) यः पक्षः (उत्तमः गरुत्) 'गरुत्पक्षच्छदाः पत्रम्' इत्यमरः, तस्य पवनः (वायुः) तद्वेगजन्यवातः तेन उद्धतः (संवर्धितः) यः रोषः (कोपः) एव वह्निः (अग्निः) यस्य स तेन, तीव्रः=त्वरितः, कलत्रसहितः=कलत्रम् (पत्नी) 'कलत्रं श्रोणिभार्ययोः' इत्यमरः, तेन सहितः (युतः) आर्तः=त्रस्तः, भुजगः=(सर्पः) सर्पः पृदाकुः भुजगः' इत्यमरः, यथा=इव, मद्भयेति=मत् (मत्सकाशात्) यत् भयम् (साध्वसम्) 'भीतिर्भीः साध्वसं भयम्' इत्यमरः, तेन विनाशितः (प्रणष्टः) धैर्यस्य=धीरतायाः सारः (बलम्) 'सारो बले स्थिरांशे च' इत्यमरः, यस्य स आर्तः=त्रस्तः, भीतः सन्, किं यासि=किं गच्छसि मा अग्रेसर । अत्र भुजगब्राह्मणयोस्समानावस्थातुलनयोपमाऽलङ्कारः । छन्दो वसन्ततिलका । लक्षणन्तूभयोरुक्तमेव ॥ ८ ॥

न गन्तव्यम्=नापसर्तव्यम् प्रयासेऽपि भवान्नाग्रे गन्तुं क्षमः इति भावः ।

हे अत्यन्त डरे हुए स्त्री एवं पुत्रों को बचाने में असमर्थ ब्राह्मण ! गरुड के आगे के पंख से उठी हवा से बढ़ी क्रोध रूप आग से उत्तेजित, आतुर एवं पीडित, अपनी स्त्री सहित साँप की तरह मेरे भय से नष्ट धैर्य एवं बल से क्यों जा रहे हो ?

(इतना कहने पर भी ब्राह्मण को जाते हुए देखकर) हे ब्राह्मण ! मत

वृद्धः--ब्राह्मणि ! न भेतव्यम् । पुत्रकाः न भेतव्यम् । सविमर्शा ह्यस्य वाणी ।

घटोत्कचः--(स्वगतम्) भोः ! कष्टम् ।

जानामि सर्वत्र सदा च नाम
द्विजोत्तमाः पूज्यतमाः पृथिव्याम् ।
अकार्यमेतच्च मयाऽद्य कार्यं
मातुर्नियोगादपनीतशङ्कम् ॥६॥

ब्राह्मणी इति--न भेतव्यम्=नात्र किञ्चित् भयस्य कारणम्, अस्य=पुरुषस्य, वाणी=वाक्, सविमर्शा=विमर्शः (साध्वसाधुविवेकः) तेन सहिता (युता) कर्तव्याकर्तव्यविचारपूर्णा अस्तीति भावः । एषः नैव विचारान्धः ।

स्वगतम्=आत्मगतम्, यथा धनञ्जयः 'सर्वश्राव्यं प्रकाशं स्यादश्राव्यं स्वगतं मतम्' इति । यत्तु सर्वस्य अश्राव्यं तत् स्वगतम् इति शब्दोऽभिधेयः । कष्टम्=कष्टप्रदमेतत् ।

जानामीति--द्विजोत्तमाः नाम पृथिव्याम् सर्वत्र सदा च पूज्यतमाः इति जानामि, अद्य मया एतत् अकार्यम् च मातुः नियोगात् अपनीतशङ्कम् कार्यम् इत्यन्वयः : ।

द्विजोत्तमाः=ब्राह्मणाः, नाम; पृथिव्याम्=धरित्र्याम्, सर्वत्र=सर्वदेशे, सदा च=सर्वस्मिन्नेव काले वा, पूज्यतमाः=अतिशयेन पूजनीयाः इति जानामि=सम्यग्रूपेण वेद्मि, मया=घटोत्कचेन, अद्य=इदानीम्, एतत्=निर्देश्यमाणम्, अकार्यम्=ब्राह्मणपरिखेदनं कुत्सितं कर्म, मातुः (जनन्याः हिडिम्बायाः) नियोगात्=आज्ञया, अपनीतशङ्कम्=अपनीता (व्यपगता)

जाओ, रुक जाओ । प्रयास करने पर भी तुम नहीं जा पाओगे ।

वृद्ध--रे ब्राह्मणी ! तुम मत डरो, हे लड़कों ! तुमलोग भी मत डरो । इसके वचन विचारपूर्ण एवं सही और गलत समझने वाले हैं ।

घटोत्कचः--(मन ही मन) ओह ! बडा कष्ट है--

मैं अच्छी तरह यह जानता हूँ कि ब्राह्मण धरती में हर जगह और हर समय पूजनीय होते हैं । फिर भी आज यहाँ मुझे यह बुरा काम माँ की आज्ञा से बिना किसी संकोच के करना है ।

वृद्धः--ब्राह्मणि ! किं न स्मरसि तत्रभवता जलक्लिन्नेन मुनिनोक्तम् अनपेतराक्षसमिदं वनमप्रमादेन गन्तव्यमिति । तदेवोत्पन्नं भयम् ।

ब्राह्मणी--किं दाणि अय्यो मज्झत्थवण्णो विअ दिस्सदि । [किमिदानीमार्यो मध्यस्थवर्ण इव दृश्यते ।]

वृद्धः--किं करिष्यामि मन्दभाग्यः ।

शङ्का (संशयः) यथा स्यात्तथा निश्शङ्कम्, कार्यम्=अवश्यमेव कर्तव्यम् । छन्दश्चात्रोपजातिः (पूर्वपादे इन्द्रवज्रा अपरपादे उपेन्द्रवज्रा) । लक्षणन्तु-'स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः, उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ । अनन्तरोदीरितपक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः' इति ॥ ९ ॥

ब्राह्मणि इति--किं न स्मरसि=किं तव स्मृतिपटले नास्ति, तत्रभवता=श्रीमता पूजनीयेन, जलक्लिन्नेन=तन्नाम्ना, मुनिना=ऋषिणा, उक्तम्=भणितम्, यत्, इदम्=पुरोदृश्यमानम्, वनम्=काननम्, अनपेतराक्षसम्=न अपेताः (वियुक्ताः) राक्षसाः (यातुधानादयः) यस्मिन् तत् अरहितयातुधानराक्षसादिकम्, राक्षसाकीर्णमिति भावः, तस्मात् अप्रमादेनः=सावधानतया, गन्तव्यम्=गमनीयम्, इति=यावत्, 'इति हेतुप्रकरणप्रकारादिसमाप्तिषु' इति वैजयन्ती, तदेव=मुनीङ्गितमेव, भयम्=राक्षसादिद्वारा परिखेदनभीतिः, उपपन्नम्=संप्राप्तम् ।

किमिति--किम्=किमर्थम्, इति क्षेपः 'प्रश्ने क्षेपे विकल्पे किम्' इति वैजयन्ती, किं प्रश्नाक्षेपकुत्सायां वितर्कस्य च गोचरे' इत्यपि, इदानीम्=अधुना, आर्यः=अत्र भवान्, मध्यस्थवर्णः=मध्यस्थः (उदासीनः किङ्कर्तव्यविमूढः) वर्णे इव वर्णो यस्य स उदासीनच्छायः, इव दृश्यते=परिलक्ष्यते ।

किमिति--किं करिष्यामि=किं विधास्यामि, कोऽन्यउपायः, मन्द-

वृद्धः--हे ब्राह्मणी ! क्या तुम भूल गई कि पूजनीय जलक्लिन्न ऋषि ने कहा था कि यह वन निरापद नहीं है और राक्षस आदि इसमें रहते हैं । अतः सावधानी से जाना होगा । वही भय सामने आ गया है ।

ब्राह्मणी--क्यों आप इस समय बहुत उदासीन दिखाई पड़ रहे हैं ?

ब्राह्मण--मैं अभागा और क्या कर सकता हूँ ।

ब्राह्मणी--णं विक्कोसामो। [ननु विक्रोशामः।]

प्रथमः--भवति ! कस्य वयं विक्रोशामः।

इदं हि शून्यं तिमिरोत्करप्रभै-
नंगप्रकारैरवरुद्धदिक्पथम्।
खगैर्मृगैश्चापि समाकुलान्तरं
वनं निवासाभिमतं मनस्विनाम् ॥१०॥

भाग्यः=मन्दम् (मलिनम्) भाग्यम् (नियतिः) 'भाग्यं स्त्री नियतिर्विधिः' इत्यमरः, यस्य स अल्पभाग्यः, गतश्रीकः।

ननु इति—ननु=मंत्रणार्थकमिदम् "नन्वाक्षेपे परिप्रश्ने प्रत्युक्तावदधारणे। वाक्यारम्भेऽप्यनुनयामन्त्रणानुज्ञयोरपि' इति हैमः, एष मम तर्को यत्, विक्रोशामः=सहायतार्थमुच्चैः रोदिमः॥ ८॥

कस्येति--वयम्, कस्य=केन सह, विक्रोशामः=सहायतार्थमाह्वयामः किमर्थम्—

इदमिति—तिमिरोत्करप्रभैः नगरप्रकारैः अवरुद्धदिक्पथम् खगैः मृगैः च अपि समाकुलान्तरम् इदम् शून्यम् वनम् मनस्विनाम् निवासाभिमतम् हि इत्यन्वयः।

तिमिरेति—तिमिरम् (तमः, अन्धकारः) 'तमिस्रं तिमिरं तमः' इत्यमरः, तस्य उत्करः (राशिः) 'स्यान्निकायः पुञ्जराशी तूत्करः कूटमस्त्रियाम्' इत्यमरः, तस्य इव प्रभा (कान्तिः, रुचिः) "स्युः प्रभारुग्रुचिस्त्विड्भा,' इत्यमरः, येषान्तैः अन्धकारनिचयश्यामैः, नगेति—नगाः (वृक्षाः शैलाश्च) शैलवृक्षौ नगानगौ' इत्यमरः, तेषां प्रकाराः (भेदाः) 'प्रकारौ भेदसादृश्ये' इत्यमरः, तैः विविधवृक्षपर्वतैः, अवेति=अवरुद्धाः (निरुद्धाः) दिशाम् (आशानाम्) 'दिशस्तु ककुभः काष्ठा आशाश्च हरितस्तथा' इत्यमरः, पन्थानः (मार्गाः) 'अयनं वर्त्म मार्गाध्वपन्थानः पदवी सृतिः' इत्यमरः, यस्मिन् तद्

ब्राह्मणी--हम लोग सहायता के लिए जोर जोर से चिल्लावें।

पहला (लड़का)--माँ, यहाँ कौन सुनेगा जिनसे हम चिल्लावें क्योंकि--

यह अत्यन्त ही सूना जङ्गल है। घने पेंड़ों एवं ऊँचे पहाड़ों के कारण

वृद्धः--ब्राह्मणि ! न भेतव्यं, न भेतव्यम् । मनस्विजननिवासयोग्य-मिति श्रुत्वा विगत इव मे संत्रासः । शङ्के नातिदूरेण पाण्डवाश्रमेण भवितव्यम् । पाण्डवास्तु,

---

निरुद्धमार्गमत एव दुस्सञ्चारम् वृक्षपर्वतसङ्कुलत्वात्, खगैः=पक्षिभिः 'खगे विहङ्गविहगविहङ्गमविहायसाः' इत्यमरः, मृगैः=पशुभिः 'पशवोऽपि मृगाः' इत्यमरः, समेति=सम्यक् (पूर्णरूपेण) आकुलम् (व्याप्तम्) अन्तरम् (अन्तरालम्) यस्य तत् अत्यन्तसङ्कुलम्, इदम्=पुरतः स्थितम्, शून्यम्= जनसञ्चारविरहितम्, निर्मानुषम्, वनम्=काननम्, 'गहनं काननं वनम्' इत्यमरः, मनस्विनाम्=तपोवलद्वारा प्रशस्तचित्तानां मुनीनामेव, निवासाभिमतम्=निवासाय (वासस्थानाय), अभिमतम् (इष्टम्, उपयुक्तम्) वासयोग्यम् न तु सामान्यजनानाम् येऽस्मान् शृण्वन्ति । नात्र कोऽपि यस्य वयं विक्रोशामः । अत्र पूर्वोक्तस्य समर्थनेन काव्यलिङ्गाऽलङ्कारः । तल्लक्षणं यथा—

'समर्थनीयस्यार्थस्य काव्यलिङ्गं समर्थनम् ।

वृत्तन्तु वंशस्थम् । लक्षणं यथा--'जतौ तु वंशस्थमुदीरितं जरौ' इति ॥१०॥

ब्राह्मणि इति—न भेतव्यम्=स्थिरा भव, मनस्विजनेति=मनस्विनः (प्रशस्त-मनस्काः) ये जनाः (नराः) तेषां निवासाय (वासार्थम्) योग्यम् (उप-युक्तम्) प्रशस्तचित्तजनवासाय उपयुक्तम् इदं वनमिति, श्रुत्वा=आकर्ण्य, मे=मम, सन्त्रासः=भयम्, विगतः इव=यात इव विगतज्वर इव । शङ्के=तर्कयामि, न, अतिदूरेण=निकटे एव, पाण्डवाश्रमेण=पाण्डवानाम् (पाण्डुपुत्राणां युधिष्ठिरादीनाम्) आश्रमः (वसतिः) तेन, भवितव्यम्= अत्र सन्निकट एव पाण्डवाश्रमः संभवति । किञ्च पाण्डवाः=पाण्डुसुताः, तु प्रशंसार्थे 'तु पादपूरणे भेदे समुच्चयेऽवधारणे । पक्षान्तरे नियोगे च प्रशंसायां विनिग्रहे' इति मेदिनी ।

यह अन्धकारमय है और यहाँ चारों ओर के रास्ते रोके गये हैं । इसका भीतरी भाग अनेकों पंछियों और जानवरों से व्याप्त हैं । यहाँ तो सिद्ध तपस्वी ही रह पाते हैं, सामान्य जन कहाँ, जो हमारी पुकार सुन सकें ।

वृद्धः—हे ब्राह्मणी ! मत डरो (साहस करो) । इस बन को मनस्वी जन का निवास योग्य सुनकर मेरा डर चला सा गया है । मेरा विचार है कि पाण्डवों का आश्रम यहाँ से ज्यादा दूर नहीं होगा । पाण्डव तो—

युद्धप्रियाश्च शरणागतवत्सलाश्च
दीनेषु पक्षपतिताः कृतसाहसाश्च ।
एवंविधप्रतिभयाकृतिचेष्टितानां
दण्डं यथार्हमिह धारयितुं समर्थाः ॥ ११ ॥

प्रथमः—भोस्तात ! न तत्र पाण्डवा इति मन्ये ।

युद्धप्रिया इति=युद्धप्रियाः च शरणागतवत्सलाः च दीनेषु पक्षपतिताः कृतसाहसाः च इह एवंविधप्रतिभयाकृतिचेष्टितानाम् यथार्हम् दण्डम् धारयितुम् समर्थाः इत्यन्वयः ।

युद्धप्रियाः=युद्धम् (रणः) 'युद्धमायोधनं जन्यम्' इत्यमरः, प्रियम् (अभिमतम्) येषान्ते सत्कारणार्थं रणोत्सुकाः, शरणेति=शरणम् (रक्षा) 'शरणं गृहरक्षित्रोः' इत्यमरः, तदर्थम् आगताः (प्राप्ताः) तेषु वत्सलाः (आर्द्रहृदयाः), दीनेषु=आर्तेषु, दरिद्रेषु, पक्षपतिताः=पक्षग्राहिणः, कृतसाहसाः=कृतम् (विहितम्) साहसम् (शौर्यम्) यैस्ते ज्ञातवीर्या, इह=अत्र, एवमिति=एवंविधम् (एतादृशम्) प्रतिभयम् (भयङ्करम्) 'भयङ्करं प्रतिभयम्' इत्यमरः; आकृतिः (आकारः) चेष्टितम् (इङ्गितम्, चेष्टा) येषान्तेषाम् भयङ्कराकारेङ्गितानाम्,दुर्जनानाम्, यथार्हम्=यथायोग्यम्, दण्डम् (यमः), धारयितुम्=नियन्तुम् दण्डेन वशीकर्तुम्, समर्थाः=क्षमाः दुष्टनिग्रहार्थं समर्थाः इति भावः । पद्येऽस्मिन्परिकरणाङ्कुराऽलङ्कारः । लक्षणन्तु 'अलङ्कारः परिकरः साभिप्राये विशेषणे' । वसन्ततिलकावृत्तम् । लक्षणन्तूक्तमेव ॥ ११ ॥

भोस्तात इति—तत्रः=तस्मिन् स्थाने यत्र ते अवसन्, पाण्डवाः=पाण्डुपुत्राः, न सन्ति=न उपस्थिताः, इति=इत्थम् 'इति स्वरूपे सान्निध्ये विवक्षानियमेऽपि च' इति हैमः, मन्ये=जाने ।

धर्मपूर्वक के युद्ध मे रूचि रखने वाले, शरण में आए जनों के ऊपर दया रखने वाले, सदा ही दीन दुखियों के पक्ष लेने वाले, किसी भी काम को साहस के साथ करने वाले हैं। वे ही यहाँ भयावह चेहरे एवं भयङ्कर कार्य करने वालों को यथोचित दण्ड देने में भी समर्थ हैं॥ ११ ॥

पहला (लड़का)—पिताजी, मेरे विचार में आश्रम में पाण्डव नहीं होंगे ।

वृद्धः—कथं त्वं जानीषे।

प्रथमः—श्रुतं मया तस्मादागच्छता केनचिद् ब्राह्मणेन शतकुम्भं नाम यज्ञमनुभवितुं महर्षेर्धौम्यस्याश्रमं गता इति।

वृद्धः—हन्त हताः स्मः।

प्रथमः—तात! न तु सर्व एव। आश्रमपरिपालनार्थमिह स्थापितः किल मध्यमः।

वृद्धः—यद्येवं सन्निहिताः सर्वे पाण्डवाः।

प्रथमः—स चाप्यस्यां वेलायां व्यायामपरिचयार्थं विप्रकृष्टदेशस्थ इति श्रूयते।

कथमिति—कथम्=केन प्रकारेण 'प्रकारेऽन्यथेतरथा कथमित्थं यथा तथा' इति वैजयन्ती; त्वम् जानीषे=भवान् अवगतोऽर्थः।

श्रुतमिति—तस्मात्=पाण्डवस्थानात्, शतकुम्भम्=तन्नामयज्ञविशेषम्, अनुभवितुम्=द्रष्टुम्, धौम्यस्य=तन्नाम्नो मुनेः पाण्डवपुरोहितस्य।

हन्तेति—हन्त=विषादम्, हताः=निहताः अनाथाः।

तातेति—सर्व एव=युधिष्ठिरप्रमुखाः सर्वे पाण्डवाः, आश्रमपरिपालनार्थम्=आश्रमरक्षार्थं, मध्यमः=ज्येष्ठादवरः भीम इत्यर्थः, स्थापितः=नियुक्तः।

यद्येवमिति—यदि एवम्=यदि भीमः अत्र तिष्ठति, सर्वे पाण्डवाः=युधिष्ठिरादयः पञ्चैव पाण्डवाः, सन्निहिताः=निकटस्था एव।

सचापीति—सः=भीमः, अस्यां वेलायाम्=अस्मिन् क्षणे, व्यायाम-

वृद्ध—यह तुम कैसे जानते हो?

पहला (लड़का)—उसी आश्रम से आए किसी ब्राह्मण का कहा सुना है कि पाण्डव शतकुम्भ नामक यज्ञ में सम्मिलित होने के लिए महर्षि धौम्य के आश्रम पर गए हुए हैं।

वृद्ध—ओह, तब तो हमलोग मारे गए।

पहला (लड़का)—पिताजी, सब के सब तो नहीं गए हैं। आश्रम की रक्षा के लिए यहाँ मध्यम (मझले अर्थात् भीम) को रखा गया है।

वृद्ध—यदि ऐसा हो तो सभी पाण्डव उपस्थित ही हैं।

पहला (लड़का)—वे भी इस समय तो व्यायाम के अभ्यास के लिए

वृद्धः—हन्त निराशाः स्मः। भवतु पुत्र व्यपश्रयिष्ये तावदेनम्।

प्रथमः—अलमलं परिश्रमेण।

वृद्धः—पुत्र ! निर्वेदप्रत्यर्थिनी खलु प्रार्थना। भवतु पश्यामस्तावत्। भो भोः पुरुष ! अस्त्यस्माकं मोक्षः।

परिचयार्थम्=व्यायामः (मल्लव्यापारः) तस्य परिचयः (अभ्यासः) तस्य अर्थे (प्रयोजने) 'अर्थोऽभिधेयरैवस्तुप्रयोजननिवृत्तिषु' इत्यमरः, तत् व्यायामानुष्ठानाय विप्रकृष्टदेशस्थः=विप्रकृष्टे (दूरे) 'स्यात् दूरं विप्रकृष्टं स्यात्' इत्यमरः, यो देशः (स्थानम्) तत्र तिष्ठतीति, आश्रमाद्दूरप्रदेशं गत इति भावः। इति श्रूयते=श्रुतिपथगोचरः अयं वृत्तान्तः इति।

हन्तेति—हन्त=विषादः 'हन्त हर्षेऽनुकम्पायां वाक्यारम्भविषादयोः' इत्यमरः, निराशाः=निर्गता (समाप्ता) ''निर्निश्चयनिषेधयोः'' इत्यमरः. आशा (उपायः) येषान्ते, एनम्=इममेव पुरुषम्, व्यपश्रयिष्ये=प्रार्थयिष्ये।

अलमिति—श्रमेण=प्रार्थनाश्रमेण, अलम्=न प्रयोजनम् 'माऽलञ्च वारणे' इत्यमरः। प्रार्थनया नो फलम्।

पुत्र इति—प्रार्थना=याञ्चा, अनुरोधः, निर्वेदेति=निर्वेदः (विरागः) अयत्नत्वम् निराशा वा) तस्य प्रत्यर्थिनी (विरोधिनी शमनी) खलु=निश्चयेन 'निषेधवाक्यालङ्कारजिज्ञासानुनये खलु' इत्यमरः, अन्योपायाभावे आशाभूमिरनुरोध इति भावः, भवतु=यद्भवितव्यं तत् स्यात्, पश्यामस्तावत्=यतिष्यामहे। भो इति—भो पुरुष ! हे पुरुषाकृते, अस्माकम्=नः, मोक्षः=अस्मात् सङ्कटात् मुक्तिः।

कहीं दूर जाते हैं, ऐसा सुनने में आया है।

वृद्ध—ओह, अब बचने की कोई उम्मीद नहीं है ? क्या करें। जो हो। तब अब इसीसे ही अनुरोध करूँ।

पहला (लड़का)—नहीं पिताजी, यह कहना बेकार है।

वृद्ध—बेटे, पुकार निराशा को शमन करने वाली (आशा देने वाली) होती है। अच्छा, तो देखा जाय। (घटोत्कच से) हे पुरुष ! क्या करने से तुमसे हमलोग छुटकारा पा सकते हैं ?

घटोत्कचः—मोक्षोऽस्ति समयतः।

वृद्धः—कः समयः ?

घटोत्कचः—अस्ति मे तत्रभवती जननी। तयाऽहमाज्ञप्तः। पुत्र ! ममोपवासनिसर्गार्थमस्मिन्वनप्रदेशे कश्चिन्मानुषः परिमृग्यानेतव्य इति। ततो मयाऽऽसादितो भवान्।

पत्न्या चारित्रशालिन्या द्विपुत्रो मोक्षमिच्छसि।
बलाबलं परिज्ञाय पुत्रमेकं विसर्जय॥ १२॥

मोक्षोस्तीति—समयतः=शपथेन, आचाराद्, संवित्तः 'समयाः शपथाचारकालसिद्धान्तसंविदः' इत्यमरः।

क इति—कः समयः=कीदृशोऽस्ति स आचारः ?

अस्तीति—तत्रभवती=माननीया, जननी=माता, आज्ञप्तः=आदिष्टः, उपवासनिसर्गार्थम्=उपवासस्य (निराहारव्रतस्य) निसर्गः (उत्सर्गः, पारायणम्) तस्य अर्थम् (निमित्तम्) व्रतपूर्णानन्तरभोजनार्थम्, अस्मिन्=पुरःस्थिते, वनप्रदेशे=कानने, कश्चित्=यः कः अपि, मानुषः=नरः, परिमृग्य=अन्विष्य, आसादितः=प्राप्तः, आक्रान्तः।

पत्न्येति—चारित्रशालिन्या पत्न्या (सह) द्विपुत्रः मोक्षम् इच्छसि (चेत्) बलाबलम् परिज्ञाय एकम् पुत्रम् विसर्जय इत्यन्वयः।

चारित्रशालिन्या=सच्चरित्रया, पतिधर्मपरायणया, पत्न्या=सहधर्मचारिण्या सह, द्विपुत्रः=द्वौ (द्विसङ्ख्याकौ एकपुत्रत्यागात् अवशेषौ) पुत्रौ (सुतौ) यस्य सस्तथाभूतः, मोक्षम्=अस्मत्तः मुक्तिम्, इच्छसि=वाञ्छसि चेत्

घटोत्कच—हाँ जी, एक शर्त पर यह हो सकता है।

वृद्ध—ऐसी कौन शर्त है।

घटोत्कच—मेरी, पूजनीया माताजी हैं। उन्होंने मुझे यह आज्ञा दी है, कि "बेटे मेरे उपवास के अन्त में पारणा करने के लिए इसी वन के भीतर किसी मनुष्य को ढूंढ कर ले आओ"। इसीलिये मैंने आपको इस तरह पकड़ा है।

यदि आप पतिव्रता पत्नी एवं दो बेटे सहित मुक्ति चाहते हैं तो आप देने योग्य एवं अयोग्य की छानबीन करके एक लड़के को मुझे दे दें॥ १२॥

वृद्धः—हुं भो राक्षसापसाद ! किमहमब्राह्मणः ?

ब्राह्मणः श्रुतवान्वृद्धः पुत्रं शीलगुणान्वितम् ।
पुरुषादस्य दत्त्वाहं कथं निर्वृतिमाप्नुयाम् ॥ १३ ॥

घटोत्कचः—

यद्यर्थितो द्विजश्रेष्ठ ! पुत्रमेकं न मुञ्चसि ।
सकुटुम्बः क्षणेनैव विनाशमुपयास्यसि ॥ १४ ॥

तर्हि बलाबलम्=योग्यायोग्यम्. परिज्ञाय—निश्चित्य, एकम् (त्रिपुत्रेष्वेकम्) पुत्रम्=सुतम्, विसर्जय=त्यज, मह्यं देहि इति भावः। पुत्रेषु कश्चिदेकं दत्वा द्वाभ्यां पुत्राभ्यां पत्न्या च सह गन्तुं शक्नोषि इति भावः। अत्र छन्दोऽनुष्टुप्। लक्षणन्तूक्तमेव ॥ १२ ॥

हुं भो इति—हुम् इति क्रोधे, 'हुं रूषोक्तौ' इति मेदिनी, भो राक्षसापसाद=राक्षसेषु (राक्षससमूहेषु) अपसादः (नीचः, हीनः) तत्सम्बुद्धौ, अब्राह्मणः=द्विजेतरः, यः अहम्।

ब्राह्मण इति—अहम् श्रुतवान् वृद्धः ब्राह्मणः शीलगुणान्वितम् पुत्रम् पुरुषादस्य दत्वा कथम् निर्वृतिम् आप्नुयाम् इत्यन्वयः।

श्रुतवान्=अधीतवेदः, वृद्धः=विगतवयस्कः, ब्राह्मणः=ब्रह्मसंस्कारसंस्कृतो द्विजः, शीलगुणान्वितम्=शीलम् (चरित्रम्) च गुणाश्च (दाक्षिण्याद्याः गुणाः च) तैः अन्वितम् (युक्तम्) पुत्रम्=तनयम्, पुरुषादस्य=पुरुषम् (नरम्) अत्ति (भक्षति) इति तस्य, 'कर्तृकर्मणोः कृतिः' इति षष्ठी, राक्षसायेत्यर्थः, दत्वा=समर्प्य, कथम्=कीदृशम्, कीदृक्प्रकारम्, निर्वृतिम्=सुखम्, मुक्तिम्, आप्नुयाम्=लभेय। अत्र छन्दोऽनुष्टुप्। लक्षणन्तूक्तमेव ॥१३॥

यद्यर्थित इति—द्विजश्रेष्ठ, यदि अर्थितः एकं पुत्रं न मुञ्चसि सकुटुम्बः क्षणेन एव विनाशम् उपयास्यसि इत्यन्वयः।

ब्राह्मणः—छिः नीच राक्षस ! क्या मैं ब्राह्मण नहीं हूँ ?

मैं शास्त्र का जानकार बूढ़ा ब्राह्मण होकर शील और गुणों से युक्त लड़के को नरमांस खाने वाले राक्षस को सौंप कर कैसे सुख या मोक्ष पाऊँगा ? ॥ १३ ॥

घटोत्कच—हे उत्तम ब्राह्मण, यदि मांगने पर एक लड़के को नहीं छोड़ोगे तो परिवार के सहित क्षण भर में ही नष्ट हो जाओगे।

वृद्धः—एष एव मे निश्चयः।

कृतकृत्यं शरीरं मे परिणामेन जर्जरम्।
राक्षसाग्नौ सुतापेक्षी होष्यामि विधिसंस्कृतम् ॥ १५ ॥

ब्राह्मणी—अय्य ! मा मा एवं। पदिमत्तधम्मिणी पदिव्वदत्ति णाम।

हे द्विजश्रेष्ठ=द्विजेषु (ब्राह्मणेषु) श्रेष्ठः (उत्तमः) तत्सम्बुद्धौ, यदि=चेद्; अर्थितः=याचितः सन्नपि, एकम्=त्रिषु एकमेव, पुत्रम्=सुतम्, न मुञ्चसि=न त्यजसि, तर्हि, सकुटुम्बः=सपरिवारः, क्षणेन एव=तत्कालमेव अचिरादेव; विनाशम्=नाशम्, उपयास्यसि=प्राप्स्यसि विनष्टो भविष्यसि इति भावः। अत्रानुष्टुप्छन्दः। लक्षणं प्रागेवोक्तम् ॥ १४ ॥

एष इति— एष एव=एतादृगेव, निश्चयः=दृढविचारः।

कृतकृत्यमिति—परिणामेन जर्जरम् कृतकृत्यम् विधिसंस्कृतम् मे शरीरम् सुतापेक्षी राक्षसाग्नौ जुहोमि इत्यन्वयः।

परिणामेन=वृद्धावस्थया, परिपाकेन, जर्जरम्=शिथिलीभूतम्, कृतकृत्यम्=कृतम् (विहितम्) कृत्यम् (कर्तव्यकर्म) येन तद् विहिताशेषकृत्यम्; विधिसंस्कृतम्=विधिना (शास्त्रोक्तमार्गेण) संस्कृतम् (शुद्धीकृतम्), मे=मम, शरीरम्=वपुः, सुतापेक्षी=सुतान् (पुत्रान् तत्प्राणान्) अपेक्षते (स्पृहयति) तच्छीलः सन् पुत्रप्राणरक्षार्थी सन्, राक्षसाग्नौ=राक्षसः (निशाचरः) एव अग्निः (वह्निः) तस्मिन्, होष्यामि=आहुतिम् दास्यामि। पद्येऽत्र रूपकालङ्कारोऽनुष्टुब्वृत्तम्। लक्षणन्तूभयोश्चोक्तम् ॥ १५ ॥

आर्य इति—आर्य=नाथ 'पतिस्त्वार्य आर्यपुत्र' इति वैजयन्ती, मा भैवम्=एतद् मा भूद्, पतिव्रता नाम=पतिः (भर्ता) एव व्रतम् (धार्मिककृत्यम्) यस्या सा, पतिमात्रधर्मिणी=पतिः (भर्ता) 'धवः प्रियः पतिर्भर्ता' इत्यमरः;

वृद्ध—मेरा यही निश्चय है।

मैं बूढ़ापे के कारण जर्जर, कर्तव्यों को पूरा किए तथा विधिपूर्वक संस्कार किए इस मेरे शरीर को लड़कों के प्राणों को बचाने के लिए राक्षसरूप आग में होम करूँगा ॥ १५ ॥

वृद्धा—हे नाथ, ऐसा तो नहीं हो सकता। पतिव्रता के लिए पति ही

गहीदफलेण एदिणा सरीरेण अय्यं कुलं अ रक्खिदुमिच्छामि । [आर्य, मा मैवम् । पतिमात्रधर्मिणी पतिव्रतेति नाम । गृहीतफलेनैतेन शरीरेणार्यं कुलं च रक्षितुमिच्छामि ।]

घटोत्कचः--भवति! न खलु स्त्रीजनोऽभिमतस्तत्रभवत्या ।

वृद्धः--अनुगमिष्यामि भवन्तम् ।

घटोत्कचः--आः वृद्धस्त्वमपसर ।

एव एकमात्रः धर्मः (आचारः वेदोक्ताचारः) 'श्रुतिस्त्री वेद आम्नायस्त्रयी धर्मस्तु तद्विधिः' इत्यमरः, धर्माः पुण्ययमन्यायस्वभावाचारसोमपाः' इत्यमरः, यस्याः सा पतिसैवेकधर्मिणी । एतेन=मदीयेन, गृहीतफलेन=गृहितम् (प्राप्तम्) फलम् (सन्तानोत्पादनकर्म) येन तेन, उक्तञ्च-इमां कन्यां प्रदास्यामि तव सन्तानहेतवे'इति, तथैव ऋग्वेदे-'प्रजां कृण्वाथामिह मोदमानौ', एवञ्च महाभारते-यदर्थमिष्यते भार्या प्राप्तः सोऽर्थस्त्वया मयि । कन्या चैका कुमारश्च कृताऽहमनृणा त्वया' इति, शरीरेण=वपुषा, आर्यम्=पतिम्, कुलम्=वंशम्, पुत्रानित्यर्थः, रक्षितुम्=गोपायितुम्, इच्छामि=तत्पराऽस्मि ।

भवतीति--भवति=आर्ये, तत्र भवत्या=अस्मन्माता, स्त्रीजनः=नारी, न अभिमतः=नेष्टः, खलु=निश्चयेन नारीजनस्यावध्यत्वात् । मम जननी नारीजनं मोक्तु नैवेच्छति ।

अनुगमिष्यामीति--भवन्तम्=त्वाम्, अनुगमिष्यामि=अनुयास्यामि । त्वया सह गच्छामि ।

आः इति--आः इति कोपे 'आस्तु स्यात्कोपपीडयोः' इत्यमरः, त्वम्=भवान्, वृद्धः=जीर्णशरीरः अस्थित्वङ्मात्रावशिष्टः नैवेष्टो भोजनाय अतः, अपसर=दूरे तिष्ठ । न त्वया कार्यमिति भावः ।

एक मात्र धर्म है । अतः सन्तान उत्पन्न करके कर्तव्य पूरे किए इस शरीर से आप एवं वंश (लड़कों) की रक्षा करना चाहती हूँ ।

घटोत्कच--मेरी माँ स्त्री के शरीर को खाना नहीं चाहती ।

वृद्ध--मैं ही तुम्हारे साथ जाऊँगा ।

घटोत्कच--छिः तुम बूढ़े हो ! दूर हटो ।

प्रथमः—भोस्तात् ! ब्रवीमि खलु तावत्किंचिय।

वृद्धः—ब्रूहि ब्रूहि शीघ्रम् ।

प्रथमः—

मम प्राणैर्गुरुप्राणानिच्छामि परिरक्षितुम् ।
रक्षणार्थं कुलस्यास्य मोक्तुमर्हति मां भवान् ॥ १६ ॥

द्वितीयः—आर्य ! मा मैवम् ।

ज्येष्ठः श्रेष्ठः कुले लोके पितृणां च सुसंप्रियः ।
ततोऽहमेव यास्यामि गुरुवृत्तिमनुस्मरन् ॥ १७ ॥

भोः इति—ब्रवीमि=बच्मि, खलु=दृढम्, किञ्चित् अहमपि वक्तुकामः ।

ममेति—(अहम्) मम प्राणैः गुरुप्राणान् परिरक्षितुम् इच्छामि, भवान् अस्य कुलस्य रक्षणार्थम् माम् मोक्तुम् अर्हति इत्यन्वयः ।

मम=मे आत्मनः, प्राणैः=असुभिः गुरुप्राणान्=गुरूणाम् (मान्यजनानाम्, पितृणाञ्च) 'गुरुः गीर्पतिपित्राद्यौ' इत्यमरः, प्राणाः (असवः जीवनम्) तान् परिरक्षितुम्=उपरक्षितुम्, इच्छामि=वाञ्छामि, राक्षसानुगमनेन पित्रोः प्राणान् रक्षितुमिच्छामि, तेन हि भवान् अस्य वंशस्य=अस्मदीयकुलस्य, रक्षणार्थम्=परित्राणार्थम्, माम्, मोक्तुम्=राक्षसार्थे त्यक्तुम्, अर्हति, मत्परित्यागेन स्वजनरक्षा विधेया । अनुष्टुब्वृत्तम् । लक्षणं पूर्वोक्तम् ॥ १६ ॥

ज्येष्ठ इति—कुले ज्येष्ठः लोके श्रेष्ठः पितृणाम् च सुसंप्रियः ततः अहम् एव गुरुवृत्तिम् अनुस्मरन् यास्यामि इत्यन्वयः ।

पहला (लड़का)—पिताजी, मैं कुछ कहना चाहता हूँ ।

वृद्ध—कहो बेटा ।

पहला (लड़का)— मैं अपने प्राणों के बलिदान द्वारा आप लोगों के प्राणों को बचाना चाहता हूँ । इस कारण इस कुल की रक्षा के लिए आपको मेरा त्याग करना चाहिए ॥ १६ ॥

दूसरा (लड़का)—(बड़े भाई से) आर्य ! आप ऐसा मत कहें, आप कुल में पहला, लोक में पूजनीय पितरों के लिए सब से अधिक प्रिय हैं । इस लिए आप ऐसा न करें । अतः गुरुजनों के प्रति अपने कर्तव्य को सोचकर मैं ही जाऊँगा ॥ १७ ॥

तृतीयः—आर्यौ ! मा मैवम् ।

ज्येष्ठो भ्राता पितृसमः कथितो ब्रह्मवादिभिः ।
ततोऽहं कर्तुमस्म्यर्हो गुरूणां प्राणरक्षणम् ॥ १८ ॥

प्रथमः—वत्स ! मा मैवम् ।

कुले—वंशे, ज्येष्ठः=प्रथमजातः, लोके—जगति, श्रेष्ठः=प्रशस्यतमः ज्येष्ठापत्यत्वात्, पितृणाम्—गुरुजनानां पितृपितामहादीनाञ्च, सुसंप्रियः=स्नेहभाक्, अतिवल्लभः ज्येष्ठस्यैव पिण्डदानादिकर्माधिकारप्राप्तिः, ज्येष्ठो भ्राता पितृसमः इत्युक्तेश्च, 'पितेव पालयेद् भ्राता ज्येष्ठो भ्रातॄन् यवीयसः' इत्यादिनीत्या च, भवान् वर्तते इति शेषः, ततः—तस्मात् कारणात्, अहम् = मध्यमः पुत्रः, एव= नान्य इत्यर्थः 'एव साम्येऽवधारणे' इति वैजयन्ती, गुरुवृत्तिम् = गुरुणाम् (मान्यजनानाम्) अर्थे या वृत्तिः (आचारः, कर्तव्यम्) तम् गुरुजननिमित्तककर्तव्यम्, अनुस्मरन् = चिन्तयन्, यास्यामि—गमिष्यामि । छन्दोऽत्रानुष्टुप् । लक्षणं पूर्वमेवोक्तम् ॥ १७ ॥

आर्यौ इति—आर्यौ—ज्येष्ठमध्यमपूर्वजौ, मा मैवम् = एतन्नयुक्तम् ।

ज्येष्ठ इति— ब्रह्मवादिभिः ज्येष्ठः भ्राता पितृसमः कथितः ततः अहम् गुरूणाम् प्राणरक्षणम् कर्तुम् अर्हः अस्मि इत्यन्वयः ।

ब्रह्मवादिभिः—ब्रह्मविद्भिः शास्त्रकारैः, ज्येष्ठः=प्रथमजातः, भ्राता= पूर्वज इत्यर्थः, पितृसमः = जनकतुल्यः इति, कथितः = उक्तः, ततः—तेन हेतुना, अहम् = कनिष्ठो भ्राता इति शेषः, गुरूणाम् = मान्यजनानाम्, प्राणरक्षणम् = प्राणानाम् (असूनाम्) रक्षणम् (परित्राणम्) कर्तुम् = विधातुम्, अर्हः= योग्यः, अस्मि, यन्मम कर्तव्यमेव । अत्र छन्दोऽनुष्टुप् ॥ १८ ॥

तीसरा (लड़का)—आर्य ! ऐसा कैसे होगा—

ब्रह्मज्ञानियों ने कहा है कि बड़ा भाई पिता के समान होता है । मैं सबसे छोटा हूँ और मैं गुरुजनों की प्राणरक्षा के लिए योग्य हूँ ॥ १८ ॥

पहला (लड़का)—बच्चे ! ऐसा नहीं—

आपदं हि पिता प्राप्तो ज्येष्ठपुत्रेण तार्यते ।
ततोऽहमेव यास्यामि गुरूणां प्राणरक्षणात् ॥ १९ ॥

वृद्धः—ज्येष्ठमिष्टतमं न शक्नोमि परित्यक्तुम् ।

ब्राह्मणी—जह अय्यो जेट्ठमिच्छदि तह अहं पि कणिट्ठमिच्छामि । [यथार्यो ज्येष्ठमिच्छति तथाहमपि कनिष्ठमिच्छामि ।]

द्वितीयः—पित्रोरनिष्टः कस्येदानीं प्रियः ।

आपदमिति—ज्येष्ठपुत्रेण आपदं प्राप्तः पिता तार्यते हि ततः अहमेव गुरूणाम् प्राणरक्षणात् यास्यामि इत्यन्वयः ।

ज्येष्ठपुत्रेण=प्रथमजातसुतेन, आपदम्=विपत्तिम्, प्राप्तः=गतः, पिता=जनकः, तार्यते=पारं नीयते, हि=निश्चयमेव, ततः=तस्मात् कारणात्, अहम्=ज्येष्ठपुत्रः इति शेषः, एव=नान्यः इति भावः, गुरूणाम्=गुरुजनानाम्, प्राणरक्षणात्=जीवनरक्षार्थम् 'हेतौ पञ्चमी', यास्यामि=राक्षसमनुगमिष्यामि । छन्दोऽनुष्टुप् ॥ १९ ॥

ज्येष्ठमिति—इष्टतमम्=प्रियतमम्, ज्येष्ठम्=प्रथमजातपुत्रम्, परित्यक्तुम्=विहातुम्; न शक्नोमि=असमर्थोऽस्मि ।

यथार्यः इति—आर्यः=नाथः, यथा=येन रूपेण, ज्येष्ठम्=ज्येष्ठपुत्रम्, इच्छति=वाञ्छति, तथा=तेनैव रूपेण, अहम्=जननी, अपि=च, कनिष्ठम्=कनिष्ठपुत्रम्, इच्छामि=वाञ्छामि ।

पित्रोरिति—पित्रोः=मातुः पितुश्च, अनिष्टः=अवाञ्छितः, इदानीम्=अधुना, कस्य प्रियः=केन वाञ्छितः अस्मीति शेषः ।

जब पिता संकट में पड़ते हैं तब बड़ा लड़का उन्हें आपत से बचाता है । इस लिए मैं गुरुजनों की प्राण रक्षा के लिए जाउँगा ॥ १९ ॥

वृद्ध—बड़ा लड़का बहुत प्यारा और आवश्यक है । उसे मैं नहीं छोड़ सकता ।

ब्राह्मणी—जिस प्रकार आप बड़े लड़के को छोड़ नहीं सकते वैसे ही मैं भी छोटे लड़के को छोड़ना नहीं चाहती हूँ ।

दूसरा (लड़का)—माँ-बाप के द्वारा न चाहा गया व्यक्ति फिर किसका प्यारा होता है ?

घटोत्कचः—अहं प्रीतोऽस्मि । शीघ्रमागच्छ ।

द्वितीयः—

धन्योऽस्मि यद् गुरुप्राणाः स्वैः प्राणैः परिरक्षिताः ।
बन्धुस्नेहाद्धि महतः कायस्नेहस्तु दुर्लभः ॥ २० ॥

घटोत्कचः—अहो स्वजनवात्सल्यमस्य ब्राह्मणवटोः ।

द्वितीयः—भोस्तात ! अभिवादये ।

वृद्धः—एह्येहि पुत्र ।

अहमिति—अहम्=घटोत्कचः, प्रीतः=प्रसन्नः, शीघ्रमागच्छ=मा चिर ।

धन्योऽस्मीति—(अहम्) धन्यः अस्मि यतः स्वैः प्राणैः गुरुप्राणाः परिरक्षिताः महतः बन्धुस्नेहात् कायस्नेहः तु दुर्लभः हि इत्यन्वयः ।

अहम्=मध्यमः पुत्रः इति शेषः, धन्यः=कृतार्थः, अस्मि=वर्ते, यत गुरुः प्राणाः=गुरुजनजीवनम्, परिरक्षिताः=परित्राताः शरीरव्ययेन इति शेषः, महतः प्रबलात्, बन्धुस्नेहात्=बन्धूनाम् (ज्ञातीनाम्) स्नेहः (प्रणयः) तस्मात् कायस्नेहः=निजशरीरमोहः, दुर्लभः=विरलः । पाठान्तरे कालस्नेहः=मृत्युस्नेहः इति च । विरलो हि बन्धुस्नेहात् स्वस्नेहः, स्वतनुस्नेहात् बन्धुस्नेहः महत्तर इत्यर्थः ॥ २० ॥

अहो इति—अहो=आश्चर्यम्, अस्य ब्राह्मणवटोः=विप्रकुमारस्य, स्वजनवात्सल्यम्=बन्धुजनस्नेहभावः ।

घटोत्कच—मैं खुश हूँ । जल्दी आओ ।

दूसरा (लड़का)—मैं धन्य हूँ, क्योंकि मैंने अपने प्राणों द्वारा गुरुजनों के प्राणों की रक्षा की है । बन्धुवर्ग के प्रति प्रेम की अपेक्षा शरीर का स्नेह कम ही होता है । ऐसे बहुत कम होंगे जो शरीर को बन्धुस्नेह से बढ़कर मानते हों ॥ २० ॥

घटोत्कच—अहो ! इस ब्राह्मण बालक का स्वजन के प्रति स्नेह है ।

दूसरा (लड़का)—हे पिताजी, मैं प्रणाम करता हूँ ।

वृद्ध—आओ बेटे, गले लग जाओ ।

विनिमाय गुरुप्राणान् स्वैः प्राणैर्गुरुवत्सल ।
अकृतात्मदुरावापं ब्रह्मलोकमवाप्नुहि ।। २१ ।।

द्वितीयः—अनुगृहीतोऽस्मि । अम्ब ! अभिवादये ।

ब्राह्मणी—जाद ! चिरं जीव । [जात ! चिरं जीव ।]

द्वितीयः—अनुगृहीतोऽस्मि । आर्य ! अभिवादये ।

प्रथमः—एह्येहि वत्स !

विनिमायेति–(हे) गुरुवत्सल स्वैः प्राणैः गुरुप्राणान् विनिमाय अकृतात्मदुरावापम् ब्रह्मलोकम् अवाप्नुहि इत्यन्वयः ।

हे गुरुवत्सल=गुरुजनप्रिय, स्वैः=निजैः, प्राणैः=असुभिः, गुरुप्राणान्=गुरूणाम् (मान्यानाम्) प्राणाः (असवः) तान्, विनिमाय=परिवर्त्य विनिमयं कृत्वा, अकृतात्मदुरावापम्=अकृतात्मभिः (आत्मज्ञानरहितैः कर्तव्यपराङ्मुखैः दुर्जनैः) दुरावापम् (दुःखेन प्राप्यम्, अप्राप्यम्) अनधिगतात्मज्ञानैर्दुर्लभम्, ब्रह्मलोकम्=उत्तमोत्तमं प्रजापतिलोकम्, अवाप्नुहि=लभस्व । स्वप्राणपणेन कृतगुरुप्राणरक्षापुण्येन ज्ञानिजनमात्रलभ्यमुत्तमलोकमाप्नुहि इति भावः। छन्दस्त्वनुष्टुप् ।। २१ ।।

अनु इति—अनुगृहीतः=अनुकम्पितः आशीर्वादेन, (मातरम्) अम्ब=मातः, अभिवादये=प्रणमामि ।

जातेति—जात=शुभजन्मन्,

अनु इति—(ज्येष्ठभ्रातरम्) आर्य=पूज्य ।

हे गुरुजन के प्रिय, तुमने अपने प्राणों का सौदा करके गुरुजनों का प्राण बचाकर जो पुण्य किया है उस पुण्य से तुम्हें ज्ञानियों के लिए ही उपलभ्य उत्तम ब्रह्मलोक मिले ।। २१ ।।

दूसरा (लड़का)—मेरे ऊपर बड़ी कृपा है। (माँ से) माँ मैं अभिवादन करता हूँ ।

ब्राह्मणी—बेटे, लम्बी उमर तक जिओ ।

दूसरा (लड़का)—बड़ी कृपा है। बड़े भाई से आर्य ! मैं प्रणाम करता हूँ ।

पहला (लड़का)—आओ भैया आओ—

परिष्वजस्व गाढं मां परिष्वक्तः शुभैर्गुणैः ।
कीर्त्या तव परिष्वक्ता भविष्यति वसुन्धरा ॥ २२ ॥

द्वितीयः—अनुगृहीतोऽस्मि ।

तृतीयः—आर्य ! अभिवादये ।

द्वितीयः—स्वस्ति ।

तृतीयः—अनुगृहीतोऽस्मि ।

द्वितीयः—भोः पुरुष । किञ्चिद् ब्रवीमि ।

घटोत्कचः—ब्रूहि ब्रूहि शीघ्रम् ।

द्वितीयः—एतस्मिन्वनान्तरे जलाशय इव दृश्यते । तत्र मे प्रकल्पित-

---

परिष्वजस्वेति—शुभैः गुणैः परिष्वक्तः त्वम् माम् गाढम् परिष्वजस्व वसुन्धरा तव कीर्त्या परिष्वक्ता भविष्यति इत्यन्वयः ।

शुभैः=कर्तव्यपालनतत्परादिभिः शोभनैः, गुणैः=धर्मैः, परिष्वक्तः=आलिङ्गितः अन्वितः, त्वम्, माम्=ज्येष्ठभ्रातरम्, गाढम्,=दृढम्, परिष्वजस्व=आलिङ्गय, वसुन्धरा=वसून् (धनानि) धारयति (वहति) या सा पृथ्वी, तव=ते, कीर्त्या=यशसा 'यशः कीर्तिः समज्ञा च' इत्यमरः, परिष्वक्ता=व्याप्ता; भविष्यति इति । पद्येऽस्मिन्वृत्तमनुष्टुप् ॥ २२ ॥

ब्रूहीति—ब्रूहि=भण यत् वक्तव्यमस्ति, शीघ्रम्=अचिरादेव ।

एतस्मिन्निति—एतस्मिन्=पुरोदृश्यमाणे, वनान्तरे=वनाभ्यान्तरे वना-

---

अनेक अच्छे अच्छे गुणों से आलिङ्गित तुम मेरा दृढ आलिङ्गन करो। तुम्हारी कीर्ति से सम्पूर्ण धरती व्याप्त रहेगी ॥ २२ ॥

द्वितीय—मैं अनुगृहीत हूँ ।

तृतीय—आर्य ! मैं अभिवादन करता हूँ ।

द्वितीय—स्वस्ति (कल्याण हो) ।

तृतीय—मैं अनुगृहीत हूँ ।

दूसरा (लड़का)—(घटोत्कच से) ओ पुरुष, मुझे कुछ कहना है ।

घटोत्कच—कहो, जल्दी कहो ।

दूसरा—इस जंगल के भीतर कहीं दूर जलाशय सा दिखाई पड़ रहा

परलोकस्य पिपासाप्रतीकारं करिष्यामि ।

घटोत्कचः--दृढव्यवसायिन् ! गम्यताम् । अतिक्रामति मातुराहार-कालः । शीघ्रमागच्छ ।

द्वितीयः--भोस्तात ! एष गच्छामि ।

(निष्क्रान्तः ।)

वृद्धः--हा हा परिमुषिताः स्मो भोः ! परिमुषिताः स्मः ।

यस्त्रिश्रृङ्गो मम त्वासीत्मनोज्ञो वंशपर्वतः ।

न्तर्भागे, जलाशयः = पुष्करिणी, दृश्यते=परिलक्ष्यते । तत्र=तस्मिन् जलाशये; प्रकल्पितपरलोकस्य = प्रकल्पितः (सङ्कल्पितः) परलोकः (अन्यलोकः) येन स तस्य अन्यलोकप्रस्थानपरायणस्य, मे = मम, पीपासेति = पातुमिच्छा पीपासा (जलपानेच्छा) तस्याः प्रतिकारम् (शमनम्) ।

दृढ़ेति--दृढव्यवसायिन् = दृढः (निश्चितः) चासौ व्यवसायः, (उद्यमः इच्छाशक्तिः) तदस्यास्तीति 'अत इनिठनौ' इत्यनेन सिद्धम्, तत्संबुद्धौ, गम्य-ताम् = त्वर्यताम् । मातुः=जनन्याः हिडिम्बायाः, आहारकालः = भोजनसमयः, अतिक्रामति = व्यतीतो भवति ।

भो इति--एष = अहं मध्यमपुत्रः ।

हा हेति--हा = शोके, विषादे, पीडायाम् 'हा विषादे च शोके च कुत्सा-दुःखार्थयोरपि' इति मेदिनी, परिमुषिताः = वञ्चिताः परिलुण्ठिताः, पुत्रस्या-पनयनादिति शेषः ।

यस्त्रिश्रृङ्ग इति--यः तु मम मनोज्ञः त्रिश्रृङ्गः वंशपर्वतः आसीत् सः मध्यमश्रृङ्गभङ्गेन मे मनः भृशम् तपति इत्यन्वयः ।

है । परलोक के लिए तत्पर मैं वहाँ प्यास बुझाकर आ जाऊँ ।

घटोत्कच--हे पक्के इरादे वाले, जाओ । मेरी माँ का खाने का समय बीत रहा है । जल्दी आना ।

दूसरा--पिता जी, अब मैं जाता हूँ ।

(चला जाता है)

वृद्ध--हाय हाय ! हम लूट लिए गए, लूट लिए गए--जो यह मेरा तीन चोटियों वाला मनोहर वंशरूप पर्वत था उसके बीचले शिखर के टूट

स मध्यश्रृङ्गभङ्गेन मनस्तपति मे भृशम् ।। २३ ।।

हा पुत्रक ! कथं गत एव ।

तरुण ! तरुणतानुरूपकान्ते !
नियमपराध्ययनप्रसक्तबुद्धे ! ।
कथमिव गजराजदन्तभग्न-
स्तरुरिव यास्यसि पुष्पितो विनाशम् ।। २४ ।।

यः = अभीष्टः, तु = अवधारणार्थे, 'तु स्याद्भेदेऽवधारणे' इत्यमरः, मम = मे, वृद्धस्य, मनोज्ञः = मनोरमः, 'कान्तं मनोरमं रुच्यं मनोज्ञं मञ्जु मञ्जुलम्' इत्यमरः, त्रिशृङ्गः = त्रीणि (त्रिसंख्याकानि) श्रृङ्गाणि (शिखराणि, त्रिपुत्ररूपाणि) यस्य स, वंशपर्वतः = वंशः (कुलम्) 'वंशोऽन्ववायः सन्तानः' इत्यमरः, एव पर्वतः (शैलः) व्यवस्थितत्वात्, आसीत् = अभूत्, सः = वंशपर्वतः, मध्येति = मध्यम् (मध्यभागस्थम् मध्यमपुत्ररूपम्), चेदम् श्रृङ्गम् (शिखरम्) 'कूटोऽस्त्री शिखरं श्रृङ्गम्' इत्यमरः, तस्य भङ्गः (विनाशः) तेन, मे = मम, मनः = चित्तम्, भृशम् = अत्यन्तम्, तपति = सन्तापमनुभवति। यथा त्रिशृङ्गः कुलपर्वतः मध्यमश्रृङ्गभङ्गेन निश्शोभः सञ्जायते तथैव मध्यमपुत्रक्षयेन त्रिपुत्रो मे वंशः शोभारहितः सञ्जातः। अत मां भृशं तपतीति भावः। अत्र रूपकालङ्कारः। लक्षणं प्रागेवोक्तम् ।। २३ ।।

हा इति--हा = कष्टम्, पुत्रक = प्रियपुत्र, अनुकम्पायाम्, कथम् गत एव = सत्यमेव यातः।

तरुणेति--तरुणतानुरूपकान्ते ! नियमपराध्ययनप्रसक्तबुद्धे ! इह गजराजदन्तभग्नः पुष्पितः तरुः इव कथम् विनाशम् यास्यसि इत्यन्वयः।

जाने से (तीन लड़कों में मझले के राक्षस के साथ जाने पर) मेरा मन अत्यन्त सन्तप्त है ।। २३ ।।

हाय ! बेटा ! तुम सचमुच ही चले गए--

हे तरुणाई के योग्य तेज वाले, नियमाचार के पालन एवं वेद आदि शास्त्रों के अध्ययन में सदा तत्पर बुद्धि वाले तरुण ! इस वन में मत्त हाथी के दाँत से कटे, फूलों से भरे वृक्ष की तरह तुम कैसे विनाश को प्राप्त हो जाओगे ।। २४ ।।

घटोत्कचः--चिरायते खलु ब्राह्मणवटुः । अतिक्रामति मातुराहार-कालः । किं नु खलु करिष्ये । भवतु दृष्टम् । भो ब्राह्मण ! आहूयतां तव पुत्रः ।

वृद्धः--आः अतिराक्षसं खलु ते वचनम् ।

तरुणेति=तरुणस्य (यूनः) भावः तरुणता (यौवनम्) तस्याः अनुरूपा (उपयुक्ता) कान्तिः (शोभा) 'शोभा कान्तिर्द्युतिश्छविः' इत्यमरः, यस्य सस्तत्सम्बुद्धौ, यौवनानुकूलद्युते, नियमेति=नियमेषु (शास्त्रोक्ताचारेषु) परा (तत्परा) यथा च अध्ययने (स्वाध्याये, वेदशास्त्रादिचिन्तायाम्) प्रसक्ता (संलग्ना) बुद्धिः (मतिः) यस्य सस्तत्सम्बुद्धौ नियमाचारवेदशास्त्रा-ध्ययनतत्परमते ! तरुण=हे युवक !, इह=अस्मिन् वनप्रदेशे, गजेति=गजराजः (मत्तगजः) तस्य दन्तः (रदः) तेन भग्नः (उत्पाटितः), पुष्पितः=कुसुमितः तरुः=वृक्षः, इव, कथम्=केन प्रकारेण, विनाशम्=नाशम्, यास्यसि=उपैषि । श्लोकेऽस्मिन् 'तरुण तरुण' शब्दप्रयोगेन यमकालङ्कारः, तरुणतां प्राप्तस्य मध्यमस्य पुष्पितवृक्षेण सह तुलनया उपमालङ्कारश्च । वृत्तमत्र पुष्पिताग्रा, लक्षणन्तु 'अयुजि नयुगरेफतो यकारो युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा' ॥ २४ ॥

चिरायते इति--ब्राह्मणवटुः=विप्रकुमारः, चिरायते=विलम्बं करोति । मातुः=जनन्याः हिडिम्बायाः, आहारकालः=भोजनसमयः, अतिक्रामति=व्यतीतो भवति । किन्नु करिष्ये=उपायोऽत्र कर्तव्यः । भवतु=यथा स्यात् तथा, दृष्टम्=ज्ञातम् । आहूयताम्=शब्दापय ।

आ इति=आः इति क्रोधे, ते=तव वचनम्=भाषितम्, अतिराक्षसम्=राक्षसमतिक्रान्तः राक्षसादपि क्रूरतरम् ।

घटोत्कच--ब्राह्मण का लड़का तो देर लगा रहा है । माँ के भोजन का समय बीतता जा रहा है, तो क्या किया जाय । अच्छा, समझ गया । (वृद्ध से) हे ब्राह्मण ! अपने लड़के को बुलाइए ।

वृद्ध--तुम्हारे बचन तो राक्षस के वचन से भी बदतर हैं ।

घटोत्कचः—कथं रुष्यति। मर्षयतु भवान् मर्षयतु। अयं मे प्रकृतिः दोषः। अथ किंनामा तव पुत्रः।

वृद्धः—एतदपि न शक्यं श्रोतुम्।

घटोत्कचः—युक्तम्। भोः! ब्राह्मणकुमार! किंनामा ते भ्राता।

प्रथमः—तपस्वी मध्यमः।

घटोत्कचः—मध्यम इति सदृशमस्य। अहमेवाह्वयामि। भो मध्यम! मध्यम! शीघ्रमागच्छ।

कथमिति=कथम् रुष्यति=कीदृक् क्रुध्यते। मर्षयतु=क्षमस्व। अयम्=क्रूरव्यवहारः, प्रकृतिदोषः=प्रकृतेः (स्वभावस्य) दोषः (दूषणम्)। अथ इति प्रश्ने 'मङ्गलानन्तरारम्भप्रश्नकार्त्स्न्येष्वथो अथ' इत्यमरः, किन्नामा=केन नाम्ना ख्यातः।

एतदिति—एतदपि=तस्य नामापि, श्रोतुम्=अस्मत्तः ज्ञातुम्।

युक्तमिति—युक्तम्=उपयुक्तमेव पितुः। ब्राह्मणकुमार=विप्रतनय! ज्येष्ठ इति शेषः।

तपस्वी इति—तपस्वी=दीनः, मध्यमः=भ्रातृषु मध्यमः, पितृभ्यामपि उपेक्षितत्वात् मध्यमः।

मध्यम इति—मध्यम इति=मध्यमः नाम, अस्य=विप्रकुमारस्य, सदृशम्=अनुरूपम् उपेक्षितत्वात्। यदुक्तम्—

ज्येष्ठः पितृप्रियो नित्यं कनिष्ठो जननीप्रियः।
कर्मजो मध्यमः पुत्रो न प्रियो नैव विप्रियः॥ इति॥

घटोत्कच—अरे! आप कैसे गुस्सा गए, क्षमा करें। यह मेरे स्वभाव का दोष है। अच्छा तो आप के लड़के का नाम क्या है?

वृद्ध—यह भी हमसे सुना नहीं जा सकता।

घटोत्कच—ठीक है। (बड़े लड़के से) हे ब्राह्मण-कुमार! तुम्हारे भाई का नाम क्या है?

पहला (लड़का)—शोचनीय मध्यम (मझला)।

घटोत्कच—मध्यम नाम इसके लिए उपयुक्त है। मैं ही उसे बुलाता हूँ। हे मध्यम, मध्यम, मध्यम, जल्दी आओ!

(ततः प्रविशति भीमसेनः ।)

भीमः--कस्यायं स्वरः ?

खगशतविरुते विरौति तारं
द्रुमगहने दृढसंकटे वनेऽस्मिन् ।
जनयति च मनोज्वरं स्वरोऽयं
बहुसदृशो हि धनञ्जयस्वरस्य ॥ २५ ॥

ततः इति--ततः=मध्यम मध्यम इति सम्बोधनानन्तरम् नामसादृश्यात् अहमेवाहूत इति मन्यमानः, भीमः=पाण्डवमध्यमो भीमसेनः, प्रविशति=रङ्गमञ्चमायाति ।

कस्येति--अयम्=अस्मत्स्वरसादृश्यः, स्वरः=ध्वनिः, कस्य ?

खगेति--अयम् स्वरः खगशतविरुते द्रुमगहने दृढसङ्कटे अस्मिन् वने तारम् विरौति मनोज्वरम् जनयति च हि धनञ्जयस्वरस्य बहुसदृशः इत्यन्वयः ।

अयम्=आहूतः, स्वरः=ध्वनिः, खगेति=खगानाम् (विहगानाम्) 'खगे विहङ्गविहगविहङ्गमविहायसः' इत्यमरः, शतम् (असङ्ख्यसङ्ख्याकम्) तस्य विरुतम् (कोलाहलध्वनिः) यस्मिन्तस्मिन्, द्रुमगहने=द्रुमैः (वृक्षैः) गहने (व्याप्ते), दृढसङ्कटे=दृढम् (भृशम्) सङ्कटम् (सम्बाधः) यस्मिन् तस्मिन्, अस्मिन्=अस्माभिरुषिते, वने=कानने, तारम्=अतीवोच्चैः, विरौति=शब्दायते, मनोज्वरम्=मनसि कुतूहलम्, जनयति=उत्पादयति च, हि=कस्मात् हेतोः 'हि हेतावधारणे' इत्यमरः (अयम् स्वरः), धनञ्जयस्वरस्य=धनञ्जयस्य (अर्जुनस्य) स्वरः (कण्ठध्वनिः) तस्य, बहुसदृशः=बहु (प्रायेण) सदृशः (तुल्यः) अतीवानुरूपः, धनञ्जयस्वरसाम्यादेषः बन्धुभावं जनयतीति भावः ।

(इसके बाद भीमसेन प्रवेश करते हैं)

भीम--यह स्वर किसका है ?

इस स्वर से अनगनित पंछियों के कोलाहल से गुञ्जायमान, अनेकों पेड़ों से खचाखच भरे अत्यन्त घने इस वन में बहुत ऊँची आवाज हो रही है जो मेरे मन में उत्सुकता भी पैदा कर रही है, क्योंकि यह आवाज अर्जुन के स्वर से मिलती जुलती है ॥ २५ ॥

घटोत्कचः—चिरायते खलु ब्राह्मणवटुः । अतिक्रामति मातुराहार-कालः । किं न खलु करिष्ये । भवतु दृष्टम् । उच्चैः शब्दापयामि । भो मध्यम भोः । शीघ्रमागच्छ ।

भीमः—भोः । को नु खल्वेतस्मिन् वनान्तरे मम व्यायामविघ्नमुत्पाद्य मध्यम मध्यम ! इति मां शब्दापयति । भवतु पश्यामि स्तावत् । (परिक्रम्यावलोक्य सविस्मयम् ।) अहो दर्शनीयोऽयं पुरुषः । अयं हि,

सिंहास्य सिंहदंष्ट्रो मधुनिभनयनः स्निग्धगम्भीरकण्ठो
बभ्रुभ्रूः श्येननासो द्विरदपतिहनुर्दीप्तविश्लिष्टकेशः ।

चिरायत इति—चिरायते······करिष्ये=व्याख्यातमेव । उच्चैः=उच्चस्वरेण, उन्नतस्वरेण, शब्दापयामि=आह्वयामि दूराह्वानार्थम्, यद्यपि रूपकेषु दूराह्वानं न शास्त्रसंमतम् तथाप्यत्र प्रयोगः ।

भो इति—व्यायामविघ्नम्=व्यायामे (शारीरिकाभ्यासे) विघ्नम् (अन्तरालम्), उत्पाद्य=जनयित्वा, भवतु=यः कोऽपि स्यात्, पश्यामि तावत्=क एष इति अन्वेष्यामि तावत्, परिक्रम्य=परिक्रमापूर्वकम् कानिचित् पदानि गत्वा, अवलोक्य=घटोत्कचं दृष्ट्वा, सविस्मयम्=साश्चर्यम्, अहो=आश्चर्यम्, अयम्=पुरोदृश्यमानः पुरुषः, दर्शनीयः=द्रष्टुं योग्यः विशेषाकृतित्वात् । अयम्=घटोत्कचः, हि=विशेषे "हि पादपूरणे हेतौ विशेषेऽप्यवधारणे" इति मेदिनी ।

सिंहास्य इति—सिंहास्यः सिंहदंष्ट्रः मधुनिभनयनः स्निग्धगम्भीरकण्ठः बभ्रुभ्रूः श्येननासः द्विरदपतिहनुः दीप्तविश्लिष्टकेशः व्यूढोरा वज्रमध्यः

घटोत्कच—यह ब्राह्मण का लड़का तो देर कर रहा है । माँ के भोजन का समय गुजर रहा है । क्या करें ? अच्छा, समझ गया । जोर से बुलाऊंगा । हे मध्यम, हे मध्यम, हे मध्यम, जल्दी आओ, जल्दी ?

भीम—ओः, यह कौन है जो इस वन में मेरे व्यायाम कार्य में बाधा डालकर 'मध्यम मध्यम' कहकर मुझे बुला रहा है । जो कोई भी हो, देख तो लें । (घूमकर और देखकर अचम्भे के साथ) अहा ! यह पुरुष तो देखने लायक है । यह तो—

सिंह के जैसा मुख वाला, सिंह के ही समान दाढ़ों वाला, मदिरा के

व्यूढोरा वज्रमध्यो गजवृषभगतिर्लम्बपीनांसबाहुः
सुव्यक्तं राक्षसीजो विपुलबलयुतो लोकवीरस्य पुत्रः ॥ २६ ॥

गजवृषभगतिः लम्बपीनांसबाहुः विपुलबलयुतः लोकवीरस्य राक्षसीजः पुत्रः सुव्यक्तम् इत्यन्वयः ।

सिंहास्यः=सिंहस्य (मृगेन्द्रस्य) आस्यम् इव आस्यम् (मुखम्) 'वक्त्रास्ये वदनं तुण्डमाननं लपनं मुखम्' इत्यमरः, यस्य स, सिंहदंष्ट्रः=सिंहस्य दंष्ट्रा इव दंष्ट्राः (दन्ताः) यस्य स, मध्विति=मधुः (मद्यम्) तेन निभे (सदृशे) नयने (लोचने) यस्य स, स्निग्धेति=स्निग्धः (मधुरः) गम्भीरः (गभीरः) च कण्ठः (कण्ठध्वनिः) यस्य स, बभ्रुभ्रू=बभ्रू (पिङ्गले) भ्रुवौ (नेत्ररोमणी) यस्य सः, श्येननासः=श्येनः (पत्री) तस्य नासा इव नासा (नासिका) यस्य सः, द्विरदेति=द्विरदः=हस्ती, तेषाम् पतिः (स्वामी, श्रेष्ठः) तस्य हनुः इव हनुः (कपोलपरवर्त्यङ्गम्) यस्य सः, दीप्तेति=दीप्ताः (द्योतमानाः) (पाठान्तरे दीर्घाः इति च) यथा स्यात् तथा विश्लिष्टा (प्रकीर्णाः) केशाः (कचाः) यस्य सः, व्यूढोराः=व्यूढम् (विस्तीर्णम्) उरः (वक्षः) यस्य सः, व्यूढोरस्कः, वज्रमध्यः वज्रम् (अशनिः) इव मध्यः (मध्यभागः) यस्य सः, गजवृषभगतिः=गजानाम् (हस्तिनाम्) वृषभः (श्रेष्ठः) तस्य गतिः इव गतिः (पदन्यासम्) यस्य सः, अथवा गजस्य (हस्तिनः) इव वृषभगतिः (श्रेष्ठ-गतिः) यस्य सः, लम्बेति=लम्बौ (दीर्घौ) तथैव पीनौ (पुष्टौ च) अंसौ (स्कन्धौ) बाहू (भुजौ) च यस्य सः दीर्घपुष्टस्कन्धभुजः, विपुलेति=विपुलेन (महता) वीर्येण (बलेन) युतः (संयुतः), लोकवीरस्य=लोके (जगति) वीरः (शूरः) तस्य प्रख्यातवीरस्य, राक्षसीजः=राक्षस्याम् (यातुधान्याम्) जातः (उत्पन्नः) राक्षसीजः, पुत्रः=सुतः, इति सुव्यक्तम् (स्पष्टम्)। श्लोकेऽस्मिन् विविधोपमया संसृष्टिरलङ्कारः। लक्षणन्तु—मिथोऽनपेक्षमेतेषां

समान लाल (मादक) आँखों वाला, मीठी और गम्भीर आवाज वाला, भूरी भौहों वाला, बाज के समान नाक वाला, मत्त हाथी के समान जबड़े वाला, चमकीले एवं लम्बे-लम्बे बालों वाला, चौड़ी छाती वाला, मजबूत कमर वाला, हाथी के समान मदमत्त चाल वाला, लम्बी लम्बी भुजाओं

घटोत्कचः—चिरायते खलु ब्राह्मणवटुः। उच्चैः शब्दापयामि। भो भो! मध्यम! शीघ्रमागच्छ।

भीमः—भोः! प्राप्तोऽस्मि।

घटोत्कचः—(आत्मगतम्) न खल्वयं ब्राह्मणवटुः। अहो दर्शनीयोऽयं पुरुषः। य एष—

सिंहाकृतिः कनकतालसमानबाहु-
मंध्ये तनुर्गरुडपक्षविलिप्तपक्षः।
विष्णुर्भवेद्विकसिताम्बुजपत्रनेत्रो
नेत्रे ममाहरति बन्धुरिवागतोऽयम् ।। २७ ।।

स्थितिः संसृष्टिः। वृत्तन्तु स्रग्धरा। लक्षणम् यथा—म्रम्नैर्यानां त्रयेण त्रिमुनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम् ।। २६ ।।

भो इति—प्राप्तः=आगतः।

न खल्विति—अयम्=आगतः पुरुषः, न ब्राह्मणवटुः=न विप्रकुमारः, खलु=निश्चयमेव। अहो=आश्चर्यम् 'अहो ही विस्मये' इति वैजयन्ती। दर्शनीयः=द्रष्टुं योग्यः।

सिंहाकृतिरिति—सिंहाकृतिः कनकतालसमानबाहुः मध्ये तनुः गरुडपक्ष-विलिप्तपक्षः विकसिताम्बुजपत्रनेत्रः अयम् विष्णुः भवेत्, अयम् आगतः बन्धुः इव मम नेत्रे आहरति इत्यन्वयः।

सिंहाकृतिः=सिंहस्य (मृगेन्द्रस्य) आकृतिः इव आकृतिः (रूपम्) यस्य सः, कनकेति=कनकस्य (स्वर्णस्य) तालः (तालवृक्षः) तत्समानौ बाहू (भुजौ)

एवं विशाल कन्धों वाला, अत्यन्त बलवान् यह पुरुष अवश्य ही संसार में प्रख्यात वीर का किसी राक्षसी से जन्मा हुआ पुत्र है। यह स्पष्ट है ।।२६।।

घटोत्कच—ब्राह्मण का लड़का तो बहुत देर कर रहा है। जोर से बुला लूँ। हे मध्यम ३ जल्दी आओ।

भीम—ओः, मैं आ ही तो गया।

घटोत्कच—(मन ही मन) ये तो इन ब्राह्मण के लड़के नहीं हैं ? अहा! ये पुरुष तो दर्शन के लायक हैं। जो ये—

सिंह के जैसे आकार वाले, स्वर्ण के ताडवृक्ष के समान लम्बी भुजाओं

(प्रकाशम्) भो मध्यम ! त्वां खल्वहं शब्दापयामि ।

भीमः—अतः खल्वहं प्राप्तः ।

घटोत्कचः—किं भवानपि मध्यमः ।

भीमः—न तावदपरः ।

यस्य सः, मध्ये=मध्यभागे, तनुः=कृशः, गरुडेति=गरुडस्य (तार्क्ष्यस्य) पक्षौ (पत्रौ) 'गरुत्पक्षच्छदाः पत्रम्' इत्यमरः, इव विलिप्तो (मसृणौ) पक्षौ (पार्श्वभागौ) यस्य सः, विकसितेति=विकसितम् (प्रफुल्लम्) च तत् अम्बुजम् (कमलम्) तस्य पत्रे (दले) इव नेत्रे (नयने) यस्य सः, अयम्=आगतः, पुरुषः विष्णुः=माधवः, भवेत्=संभवति, आगतः=आगतमात्रः; अयम्=पुरुषः, बन्धुः=ज्ञातिः इव, मम=मे, नेत्रे=लोचने, आहरति=आकर्षयति। आगच्छन्नेव बन्धुभावेन मामाकर्षयति। अत्रोपमालङ्कारः, वसन्ततिलकावृत्तञ्च । लक्षणन्तूभयोस्तूक्तमेव ॥ २७ ॥

अत इति—अतः=अनेनैव कारणेन, तवाह्वानेन इत्यर्थः, खलु=निश्चयमेव, नान्यन्मदागमनप्रयोजनम्, प्राप्तः=आगतः तव सकाशात् ।

किमिति—किम्=प्रश्नार्थे 'किं कुत्सायां वितर्के च निषेधप्रश्नयोरपि' इति मेदिनी, मध्यमः=मध्यमनामा ।

न तावदिति—अपरः=मदन्यः, मद्भिन्नः, तावत्=इति अधिकारे, '……तावत् मानेऽवधारणे। सम्भ्रमे च परिच्छेदे तथा कार्त्स्न्याधिकारयोः' इति मेदिनी, न=नान्यः मध्यमनामा, अहमेव मध्यमः नैवान्यः ।

वाले, शरीर के बीच भाग में पतले, गरुड़ के पंखों जैसे चिकने पार्श्व वाले, खिले कमल की पत्तियों जैसी आँखों वाले, विष्णु हो सकते हैं। ये आते ही बन्धु के समान मेरी नजर को खींच रहे हैं ॥ २७ ॥

(प्रकट में) हे मध्यम ३ मैं तुम्हें बुला रहा हूँ ।

भीम—इसीलिए मैं आ ही गया ।

घटोत्कच—क्या आप भी मध्यम हैं ?

भीम—दूसरा तो कोई नहीं है । क्योंकि—

मध्यमोऽहमवध्यानामुत्सिक्तानां च मध्यमः।
मध्यमोऽहं क्षितौ भद्र भ्रातॄणामपि मध्यमः ॥ २८ ॥

घटोत्कचः—भवितव्यम्।
भीमः—अपि च,

मध्यमः पञ्चभूतानां पार्थिवानां च मध्यमः।
भवे च मध्यमो लोके सर्वकार्येषु मध्यमः ॥ २९ ॥

मध्यम इति—भद्र, अहम् अवध्यानाम् मध्यमः उत्सिक्तानाम् च मध्यमः अहम् क्षितौ मध्यमः भ्रातॄणाम् अपि मध्यमः इत्यन्वयः।

भद्र=हे सौम्य, अहम्=भीमः, अवध्यानाम्=अरिभिर्हन्तुमशक्यानाम् 'पाण्डवा वै अवध्याः' इति प्रसिद्धेः पाण्डवानाम्, मध्यमः=मध्यमवः, उत्सिक्तानाम्=बलवीर्योन्मत्तानाम्, च=अपि, मध्यमः, अनेनापि पाण्डवमध्ये इति सूचितम् किञ्च पाण्डवाः एव उत्सिक्ता इति, अहम्=भीमः, क्षितौ=धरित्र्याम् स्वर्गमर्त्यपाताललोकेषु मध्यमायाम्, मध्यमः=मध्यमत्वेन ख्यातः, भ्रातॄणाम्=सहोदराणाम् एकमातॄणाम्, अपि मध्यमः=मध्यमभ्रातृरूपेण जातः ज्येष्ठादवरत्वात्, अस्मीति शेषः ॥ २८ ॥

भवितव्यमिति—भवितव्यम्=संभवति।

अपि इति—अपि च=पुनरपि नैतावन्मात्रम्। किञ्च—

मध्यम इति—(अहम्) पञ्चभूतानाम् मध्यमः पार्थिवानाम् च मध्यमः भवे च मध्यमः लोके सर्वकार्येषु मध्यमः इत्यन्वयः।

अहम्=भीमः, पञ्चभूतानाम्=पञ्चानाम् पञ्चसंख्याकानाम्, भूतानाम् (पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशानाम्) मध्ये मध्यमः मध्यमभूतात्

मैं अवध्यो (किसी के द्वारा भी न मारे जा सकने वाले अर्थात् पाण्डवों) में मध्यम हूँ, मैं वीरता में गर्व करने वालों में भी मध्यम हूँ, पृथ्वी, जो खुद तीनों लोकों में मध्यम लोक है, उसमें भी मैं मध्यम रूप से प्रसिद्ध हूँ और भाइयों के बीच में भी मध्यम ही हूं ॥ २८ ॥

घटोत्कच—हो सकता है।

भीम—इतना ही नहीं, वरन्—

मैं पञ्च महाभूतों (आकाश-वायु-तेज-जल-पृथिवी) में मध्यम (मध्यम

वृद्धः—

मध्यमस्त्विति संप्रोक्ते नूनं पाण्डवमध्यमः।
अस्मान् मोक्तुमिहायातो दर्पान्मृत्योरिवोत्थितः ॥ ३० ॥

(प्रविश्य)

मध्यमः—

अस्यामाचम्य पद्मिन्यां परलोकेषु दुर्लभम्।
आत्मनैवात्मनो दत्तं पद्मपत्रोज्ज्वलं जलम् ॥ ३१ ॥

वायोर्जातत्वात्, पार्थिवानाम्=राज्ञाम् मध्येऽपि, अहम् मध्यमः 'पाण्डवाः राजपदवाच्या' इति प्रसिद्धेः, भवे=जन्मनि संसारे अपि, अहम् मध्यमः जन्मनाऽपि मध्यमः, लोके=जगति, सर्वकार्येषु=सर्वाणि (समस्तानि) च तानि कार्याणि (कृत्यानि) तेषु मध्यमः। नाम्ना, जन्मना, कर्मणा सर्वतोभावेन अहमेव मध्यमः नैवान्यः इति भावः ॥ २९ ॥

मध्यम इति—मध्यमः तु इति संप्रोक्ते नूनम् मध्यमपाण्डवः मृत्योः अस्मान् मोक्तुं दर्पात् उत्थित इव इह आयातः, इत्यन्वयः।

मध्यमः तु इति=अहं मध्यम इति, सम्प्रोक्ते=कथिते, नूनम्=निश्चयेन, अयम् मध्यमपाण्डवः=पाण्डवेषु मध्यमः भीमः, मृत्योः=राक्षसरूपात् कालात्, अस्मान्=नः, मोक्तुम्=मोचयितुम्, दर्पात्=गर्वात्, उत्थितः=कृतोत्थानः इव, इह=अत्र, आयातः=आगतः।

अस्यामिति—अस्याम् पद्मिन्याम्, परलोकेषु दुर्लभम्, पद्मपत्रोज्ज्वलम् जलम् आचम्य आत्मना एव आत्मनः दत्तम् इत्यन्वयः।

अस्याम्=पुरःस्थितायाम्, पद्मिन्याम्=पुष्करिण्याम्, परलोकेषु=लोकान्त-

---

वायु पुत्र होने के कारण) हूं, 'राजा' कहे जाने वालों (पाण्डवों) में से मैं मध्यम हूं, मैं जन्म से भी मध्यम हूं, और संसार के सभी कार्यों में मध्यस्थ रहने के कारण मैं मध्यम हूँ। मैं सब तरह से मध्यम हूँ ॥ २९ ॥

वृद्ध—'मध्यम हूँ' कहने से अवश्य ही ये मध्यम पाण्डव अर्थात् भीम हैं। ये इस राक्षस रूप मृत्यु से हमको बचाने के लिये गर्व से उठकर यहाँ आये हैं ॥ ३० ॥

मध्यम—(प्रवेश करके)।

इस तालाब में परलोक में मिलना मुश्किल कमल की पत्तियों के समान

(उपगम्य) भोः पुरुषः ! प्राप्तोऽस्मि ।

घटोत्कचः—भवानिदानीं खल्वसि मध्यमः । मध्यम ! इत इतः ।

वृद्धः—(भीमसेनमुपगम्य) भो मध्यम ! परित्रायस्व ब्राह्मणकुलम् ।

भीमः—न भेतव्यम् । न भेतव्यम् । मध्यमोऽहमभिवादये ।

वृद्धः—वायुरिव दीर्घायुर्भव ।

भीमः—अनुगृहीतोऽस्मि । कुतो भयमार्यस्य ।

वृद्धः—श्रूयताम् । अहं खलु कुरुराजेन युधिष्ठिरेणाधिष्ठितपूर्वे कुरुजाङ्गले यूपग्रामवास्तव्यो माठरसगोत्रश्च कल्पशाखाध्वर्युः केशवदासो

रेषु, दुर्लभम्=दुःखेन प्राप्यम् अप्राप्यम्, पद्मपत्रोज्ज्वलम्=पद्मस्य (कमलस्य) पत्रम् (दलम्), इव उज्वलम् (स्वच्छम्), जलम् पानीयम्=आचम्य (पीत्वा) आत्मना=स्वेन एव, आत्मनः=स्वस्य, जलम् दत्तम्=अर्पितम् । आत्मनः उदकक्रिया स्वेनैव कृता इति भावः ॥ ३१ ॥

भवानिति—भवान्=मध्यमब्राह्मणवटुः, खलु=निश्चयेन, इदानीम्=अधुना, इत इतः=अनेन मार्गेण आगच्छ ।

भीममिति—उपगम्य=उपसृत्य, परित्रायस्व=रक्ष, ब्राह्मणकुलम्=विप्रवंशम् ।

न भेतव्यमिति—न भेतव्यम्=अभयोऽस्तु, अभिवादये=प्रणमामि ।

वायुरिति—वायुः=पवनः, दीर्घायुः=चिरंजीवी ।

अनु···इति—अनुगृहीतः=अनुकम्पितः आशिषा । आर्यस्य=पूजनीयस्य, कुतः=कस्मात् ।

श्रूयतामिति—अधिष्ठितपूर्वे=शासितपूर्वे, यूपेति=यूपग्रामः (यूपनामा

स्वच्छ पानी पीकर मैंने अपने को ही अपने द्वारा जलाञ्जलि दी है । (पास जाकर) हे पुरुष मैं आ गया हूँ ॥ ३१ ॥

घटोत्कच—वास्तव में आप मध्यम हैं । मध्यम, इधर-इधर ।

वृद्ध—(भीम के पास जाकर) हे मध्यम ! ब्राह्मण-कुल को बचाइये ।

भीम—मत डरिए, मत डरिए, मैं मध्यम आप को प्रणाम करता हूं ।

वृद्ध—आप वायु के समान लम्बी आयु वाले हों ।

भीम—बड़ी कृपा है । आपको किससे डर है ?

वृद्ध—सुनिए ! मैं कुरुराज युधिष्ठिर द्वारा पहले शासित कुरु जाङ्गल

नाम ब्राह्मणः। तस्य ममोत्तरस्यां दिशि उद्यामकग्रामवासी मातुलः कोशिकसगोत्रो यज्ञबन्धुर्नामास्ति। तस्य पुत्रोपनयनार्थं सकलत्रोऽस्मि प्रस्थितः।

भीमः—अरिष्टोऽस्तु पन्थाः। ततस्ततः।

वृद्धः—ततो मामेष हि।

सजलजलदगात्रः पद्मपत्रायताक्षो
मृगपतिगतिलीलो राक्षसः प्रोग्रदंष्ट्रः।
जगति विगतशङ्कस्त्वद्विधानां समक्षं
ससुतपरिजनं भो! हन्तुकामोऽभ्युपैति॥ ३२॥

कश्चिद्ग्रामः, सवसथः) तस्मिन् वास्तव्यः (निवासी), माठरसगोत्रः= माठरेण (तन्नाम्ना ऋषिणा) समानम् (तुल्यम्ः) गोत्रम् (वंशः) यस्य सः, कल्पेति=कल्पः (यज्ञविधानम्) तस्य शाखा (विभागः) तस्यां अध्वर्यु (ऋत्विक्), पुत्रोपनयनार्थम्=पुत्रस्य (सुतस्य) उपनयनम् (संस्कारविशेषः), तस्य अर्थम् (निमित्तम्), सकलत्रः=कलत्रेण (पत्न्या) सहितः।

अरिष्ट इति—अरिष्टः=शुभः 'अरिष्टे तु शुभाऽशुभे' इत्यमरः, पन्था=मार्गम्। ततस्ततः=तदनन्तरम्।

ततः इति—ततः=प्रस्थानानन्तरमस्मिन्प्रदेशे प्राप्ते सति, एषः=पुरः-स्थितः पुरुषः—

सजलेति—भोः सजलजलदगात्रः पद्मपत्रायताक्षः, मृगपतिगतिलीलः प्रोग्र-दंष्ट्रः जगति विगतशङ्कः राक्षसः त्वद्विधानाम् समक्षम् ससुतपरिजनम् माम् हन्तुकामः अभ्युपैति इत्यन्वयः।

सजलेत्यादि—सजलः (वारिणा युक्तः) चासौ जलदः (मेघः) इव

प्रदेश के यूप नामक गाँव में रहने वाला, माठर गोत्र का कल्पशाखा का ऋत्विक् केशवदास नामक ब्राह्मण हूं। उत्तर दिशा में स्थित उद्यामक गाँव के निवासी कौशिक गोत्र के यज्ञबन्धु नामक मेरे मामा हैं। उनके लड़के का उपनयन संस्कार (जनेऊ) करने के लिये परिवार सहित चल पड़ा हूं।

भीम—आप की यात्रा सकुशल हो। उसके बाद ?

वृद्ध—उसके बाद जब मैं यहाँ पहुंचा तो यह पुरुष—

हे वीर! पानी के सहित मेघ के समान नीले वर्ण का, कमल के पत्र के

भीमः—एवम् । अनेन ब्राह्मणजनस्य मार्गविघ्नः कृतः । भवतु निग्रहिष्यामि तावदेनम् । भोः पुरुष ! तिष्ठ तिष्ठ ।

घटोत्कचः—एष स्थितोऽस्मि ।

भीमः—किमर्थं ब्राह्मणजनमपराध्यसि ।

पुत्रनक्षत्रकीर्णस्य पत्नीकान्तप्रभस्य च ।

गात्रम् (वपुः) यस्य सः अतिकृष्णवपुः, पद्मेति=पद्मस्य (कमलस्य) पत्रे (दले) इव आयते (दीर्घे) अक्षिणी (लोचने) यस्य सः, मृगेति=मृगाणाम् (पशूनाम्) पतिः (स्वामी, सिंहः) तस्य गतिः (चेष्टा) इव लीला (विलासः) यस्य सः, प्रोग्रदंष्ट्रः=प्रोग्रा (अतिभयङ्करा) दंष्ट्राः (दन्ताः) यस्य स, जगति=भुवने, 'विष्टपं भुवनं जगत्' इत्यमरः, विगतशङ्कः=विगता (अपगता) शङ्का (सन्देहः) यस्य सः, राक्षसः=यातुधानः, त्वद्विधानाम्=त्वादृशानाम् वीराणाम्, समक्षम्=प्रत्यक्षमेव, ससुतेति=सुतैः (पुत्रैः) परिजनैः (पत्न्या इत्यर्थः) च सहितम्, माम्=वृद्धब्राह्मणम्, हन्तुकामः=वधेच्छुः, अभ्युपैति=समायाति । पद्येऽस्मिन्मालिनी वृत्तम् लक्षणम् पूर्वमेवोक्तम् ॥३२॥

एवमिति—मार्गविघ्नः=मार्गे (पथि) विघ्नः (अन्तरालः), निग्रहिष्यामि=नियमिष्यामि दण्डयिष्यामि ।

किमर्थमिति—किमर्थम्=केन प्रयोजनेन, अपराध्यसि=अपराधं करोषि ?

पुत्रेति—पुत्रनक्षत्रकीर्णस्य, पत्नीकान्तप्रभस्य च वृद्धस्य विप्रचन्द्रस्य भवान् राहुः इव उत्थितः इत्यन्वयः ।

पुत्रेति=पुत्राः (तनयाः) एव नक्षत्राणि (भानि) 'नक्षत्रमृक्षं भं तारा'

समान लम्बी-लम्बी आँखों वाला, सिंह की गति के समान चेष्टा करने वाला भयङ्कर दाढ़ों वाला, यह संसार में नीडर होकर आप जैसे वीर के सामने ही स्त्री बच्चों के सहित मुझे मार डालने के विचार से आया है ॥ ३२ ॥

भीम—इस तरह से इसने ब्राह्मण के रास्ते में बाधा डाली । तो मैं इसे दण्ड दूंगा । (घटोत्कच से) ए पुरुष ! रुको रुको ।

घटोत्कच—यह मैं रुक गया हूं ।

भीम—किस कारण से ब्राह्मण के ऊपर यह अपराध कर रहे हो ?

नक्षत्रों के समान पुत्रों से घिरे हुए, चाँदनी के समान पत्नी से युक्त

वृद्धस्य विप्रचन्द्रस्य भवान् राहुरिवोत्थितः ।। ३३ ।।

घटोत्कचः—अथ किम् । राहुरेव ।

भीमः—आः,

निवृत्तव्यवहारोऽयं सदारस्तनयैः सह ।
सर्वापराधेऽवध्यत्वान्मुच्यतां द्विजसत्तमः ।। ३४ ।।

इत्यमरः, तैः कीर्णस्य (व्याप्तस्य) अथवा पुत्राः नक्षत्राणीव कीर्णाः यस्य स तस्य, पत्नीति=पत्नी (पाणिगृहीतो) एव कान्ता (मनोरमा) प्रभा (रुचिः) यस्य सः 'स्युः प्रभारुग्रुचिस्त्विड्भाः' इत्यमरः 'अथवा पत्नी कान्तप्रभा इव यस्य स, वृद्धस्य=गतवयसः, विप्रचन्द्रस्य=विप्रः (ब्राह्मणः) एव चन्द्रः (इन्दुः) तस्य अथवा विप्रश्चन्द्र इव तस्य (कृते), भवान्=त्वम्, राहुः=स्वर्भानुः चन्द्रः-ग्रहणकारणीभूतः क्रूरग्रहः इव उत्थितोऽभवः। अत्रोपमालङ्कारोनुष्टुब्वृत्तञ्च । लक्षणं प्रागेवोक्तम् ।

अथेति—अथ किम्=अवश्यमेव, राहुरेव=स्वयम् राहुः न तु राहुरिव ।

आः इति—आ इति कोपे ।

निवृत्तेत्यादि—अयम् निवृत्तव्यवहारः सदारः द्विजसत्तमः सर्वापराधे अवध्यत्वात् तनयैः सह मुच्यताम् इत्यन्वयः ।

अयम्, निवृत्तव्यवहारः=निवृत्तः (समाप्तः) व्यवहारः (लौकिकी क्रिया) यस्य सः, अथवा व्यवहारात् (लौकिककार्यात्) निवृत्तः (पराङ्मुखः) समाप्तलौकिककृत्यः, सदारः=सपत्नीकः, द्विजसत्तमः=ब्राह्मणोत्तमः, सर्वापराधे=सकलागसि, अवध्यत्वात्=हन्तुमयोग्यत्वात्, तनयैः पुत्रैः, सह=सार्धम्, मुच्यताम्=त्यज्यताम्, अग्रे गन्तुमनुमन्यताम् । छन्दोऽनुष्टुप् ।। ३४ ।।

इन बूढ़े ब्राह्मण रूप चन्द्रमा को तुम राहु के समान ग्रस रहे हो ? ।। ३३ ।।

घटोत्कच—तो और क्या ? मैं राहु के समान नहीं, राहु ही हूं ।

भीम—ओः;

ये सांसारिक व्यवहार से निवृत्त पत्नीसहित बूढ़े ब्राह्मण किसी भी अपराध में बध के लायक न होने से अपने लड़के सहित इनको मुक्त करो ।। ३४ ।।

घटोत्कचः—न मुच्यते ।

भीमः—(आत्मगतम्) भोः ! कस्य पुत्रेणानेन भवितव्यम् ।

भ्रातृणां मम सर्वेषां कोऽयं भो ! गुणतस्करः ।
दृष्टैतद्बालशौण्डीर्यं सौभद्रस्य स्मराम्यहम् ॥ ३५ ॥

(प्रकाशम्) भोः पुरुषः ! मुच्यताम् ।

घटोत्कचः—न मुच्यते ।

न मुच्यते इति—न मुच्यते = न त्यज्यते ।

आत्मगतम् इति—अनेन = दृढहठेन, कस्य = वीरस्य, पुत्रेण = तनयेन, भवितव्यम् = भाव्यम् । अयं बालवीरः कस्य तनयः स्यात् इति भावः ।

भ्रातृणामिति—भो ! अयम् मम सर्वेषाम् भ्रातृणाम् गुणतस्करः कः अहम् (अस्य) एतत् बालशौण्डीर्यम् दृष्ट्वा सौभद्रस्य स्मरामि इत्यन्वयः ।

भोः = प्रश्ने, आमन्त्रणे, अयम् = बालकवीरः, मम = मे, सर्वेषाम् = युधिष्ठिरादीनाम् समग्राणाम्, भ्रातृणाम् = बन्धूनाम्, गुणतस्करः = गुणानाम् (शौर्यसाहसादीनाम्) तस्करः (चौरः), कः = किन्नामा, कुतः आगतः इति, अहम् (अस्य पुरुषस्य) एतत् = दृढस्वभावात्मकम्, बालशौण्डीर्यम् = बालस्य (माणवकस्य) यत् शौण्डीर्यम् (औद्धत्यम्) तम् अथवा एतस्य (पुरुषस्य) बालस्य शौण्डीर्यम्, बालस्वभावौद्धत्यम्, दृष्ट्वा = विलोक्य, सौभद्रस्य = अभिमन्योः, 'अधीगर्थदयेशाम्' इति कर्मणि षष्ठी, स्मरामि = ध्यायामि । गुणव्यवहारतः एषः अभिमन्युतुल्य इति । अत्र घटोत्कचदर्शनेन अभिमन्युस्मरणात् स्मरणालङ्कारः । लक्षणन्तु—सदृशानुभवाद्वस्तुस्मृतिः स्मरणमुच्यते ।' छन्दोऽनुष्टुप् ॥ ३५ ॥

घटोत्कच—नहीं छोड़ा जाएगा ।

भीम—(मन ही मन) ए ! यह किसका लड़का होगा ?

यह कौन है जिसने मेरे सभी भाइयों के गुण चुरा लिए हैं । इसके बचपन की धृष्टता को देखकर मुझे अभिमन्यु की याद आती है ।। ३५ ।।

(प्रकट में) हे पुरुष ! छोड़ो, छोड़ो ।

घटोत्कच—नहीं छोड़ा जाएगा—

मुच्यतामिति विस्रब्धं ब्रवीति यदि मे पिता ।
न मुच्यते तथा ह्येष गृहीतो मातुराज्ञया ॥ ३६ ॥

भीमः—(आत्मगतम्) कथं मातुराज्ञेति । अहो गुरुशुश्रूषुः खल्वयं तपस्वी ।

माता किल मनुष्याणां देवतानां च दैवतम् ।
मातुराज्ञां पुरस्कृत्य वयमेतां दशां गताः ॥ ३७ ॥

मुच्यतामिति—यदि मे पिता मुच्यताम् इति विस्रब्धं ब्रवीति तथापि मातुः आज्ञया गृहीतः एष न मुच्यते हि इत्यन्वयः ।

यदि =चेत्, मे = मम, पिता = जनकः, मुच्यताम्=परित्यज्यताम्, इति= इत्थम्, विस्रब्धम् = सविश्वासम्, ब्रवीति = आज्ञापयति, तथापि=तथाभूते सत्यपि, मातुः=जनन्याः, आज्ञया=नियोगेन, गृहीतः=क्रान्तः, एषः=ब्राह्मणवटुः; न मुच्यते = न त्यज्यते, हि=निश्चयमेतत् । पक्षान्तरे यदि मे पिता मुच्यताम् इति विस्रब्धं ब्रवीति तथापि न मुच्यते, हि= किमर्थमिति चेत् एषः मातुः आज्ञया गृहीतः ॥ ३६ ॥

कथमिति—(आत्मगतम्=स्वगतम्) कथम्=सम्भवे 'कथं प्रश्ने प्रकारार्थे संभ्रमे सम्भवेऽपि च' इत्यमरः, मातुः=जनन्याः, आज्ञा = नियोगः, इति = हेतौ 'इति हेतुप्रकरणप्रकारादिसमाप्तिषु' इति, अहो !=आश्चर्यम्, प्रशंसार्थे, अयम् तपस्वी=तपश्चरणशीलः, गुरुशुश्रूषुः=मान्यजनसेवारतः ।

मातेति—मनुष्याणाम् माता दैवतानाम् च दैवतं किल वयम् मातुः आज्ञाम् पुरस्कृत्य एताम् दशाम् गताः इत्यन्वयः ।

मनुष्याणाम् = मानवानाम्, माता = जननी, दैवतानाम्=देवानाम्, च= अपि, दैवतम्=देवता, देवेभ्योऽपि परमदेवता, किल=सम्भावनायाम् 'वार्तासंभाव्ययोः किल' इति वैजयन्ती, वयम्=पाण्डवाः, मातुः = जनन्याः कुन्त्याः.

यदि मेरे पिता भी इसे छोड़ने के लिए दृढतापूर्वक आज्ञा दें तो भी इसे मैं नहीं छोड़ता । इसे मैंने माँ की आज्ञा से पकड़ा है ॥ ३६ ॥

भीम– (मन ही मन) कैसी ! माँ की आज्ञा ? ओहो ! यह बेचारा भी गुरुजन की आज्ञा. मानने वाला है ।

माँ मनुष्य के लिए निश्चय ही देवताओं की भी देवता हैं । हमलोग माँ

(प्रकाशम्) भोः पुरुष ! प्रष्टव्यं खलु तावदस्ति ।

घटोत्कचः---ब्रूहि ब्रूहि, शीघ्रम् ।

भीमः---का नाम भवतो माता ।

घटोत्कचः---श्रूयतां, हिडिम्बा नाम राक्षसी;

कौरव्यकुलदीपेन पाण्डवेन महात्मना ।
सनाथा या महाभागा पूर्णेन द्यौरिवेन्दुना ।। ३८ ।।

भीमः---(सहर्षमात्मगतम्) एवं हिडिम्बायाः पुत्रोऽयम् । सदृशो

आज्ञाम्=नियोगम्, पुरस्कृत्य=स्वीकृत्य, एताम्=एतादृशीम्, दशाम्=अवस्थाम्, गताः=प्राप्ताः स्म । पद्येऽस्मिन्नर्थान्तरन्यासोऽलङ्कारः । लक्षणञ्चेत्थम्- "भवेदर्थान्तरन्यासोऽनुषक्तार्थान्तराभिधा ।" छन्दस्त्वनुष्टुप् ।। ३७ ।।

भो इति---(प्रकाशम्=प्रकटरूपेण, श्राव्यरूपेण) प्रष्टव्यम्=ज्ञातव्यम् ।

कौरव्येति---या महाभागा कौरव्यकुलदीपेन महात्मना पाण्डवेन पूर्णेन इन्दुना द्यौः इव सनाथा इत्यन्वयः ।

या महाभागा=सौभाग्यवती, कौरव्येति=कुरोः अपत्यं पुमान् अथवा कुरूणां राजा कौरव्यः कुरुनादिभ्यो ण्यः इति ण्यप्रत्ययः, तस्य कुलम् (वंशः) तस्य दीपः (प्रकाशकः) तेन, महात्मना=महान् (विशालः) आत्मा (अन्तर्हृदयम्) यस्य तेन, उदारचरितेन, पाण्डवेन=पाण्डुपुत्रेण भीमेन इति शेषः, पुर्णेन=षोडशकलायुक्तेन, इन्दुना=चन्द्रेण, द्यौः=व्योम इव, सनाथा=सनाथीकृता नाथवती । उपमालङ्कारः । लक्षणमुक्तम् । अनुष्टुब्वृत्तम् ।। ३८ ।।

एवमिति---सहर्षम्=हर्षोन्मादसहितम्, हिडिम्बापुत्र इति परिचयात्,

---

की आज्ञा को मानकर ही इस अवस्था में पहुंच गए हैं। (प्रकट में) हे पुरुष ! तुम से कुछ पुछना है ।। ३७ ।।

घटोत्कच—कहिए, जल्दी कहिए ।

भीम---तुम्हारी माँ का नाम क्या है ?

घटोत्कच---सुनिए । हिडिम्बा नामक एक राक्षसी है ।

वे कौरव कुल के दीपक महात्मा पाण्डव (भीम) के द्वारा जैसे पूर्ण चन्द्रमा से आकाश सनाथित होता है उसी तरह सनाथित की गई है ।।३८।।

भीम—(खुशी के साथ मन ही मन) तो यह हिडिम्बा का पुत्र है।

ह्यस्य गर्वः ।

रूपं सत्त्वं बलं चैव पितृभिः सदृशं बहु ।
प्रजासु वीतकारुण्यं मनश्चैवास्य कीदृशम् ।। ३९ ।।

(प्रकाशम्) भोः पुरुष: । मुच्यताम् ।

घटोत्कचः--न मुच्यते ।

भीमः--भो ब्राह्मण ! गृह्यतां तव पुत्रः । वयमेनमनुगमिष्यामः ।

द्वितीयः--मा मा भवानेवम् ।

आत्मगतम्=स्वगतम्), एवम्=एषः वृत्तान्तः, अस्य=पुरुषस्य, गर्वः=अभिमानः, सदृशः=उपयुक्तः, अनुरूपः ।

रूपमिति--अस्य रूपम् सत्वम् बलम् च पितृभिः बहु सदृशम् प्रजासु वीतकारूण्यम् मनः च एव कीदृशम् इत्यन्वयः ।

अस्य=घटोत्कचस्य, रूपम्=आकृतिः, सत्त्वम्=पराक्रमः, बलम्=सामर्थ्यम्, च=अपि, पितृभिः=जनकैः युधिष्ठिरादिभिः, बहु=अत्यन्तम्, सदृशम्=तुल्यम्, प्रजासु=प्रजाजनेषु, बीतकारूण्यम्=निष्ठुरम्, निर्दयम्, मनः=चित्तम्, कीदृशम्=कथम्, च एव=पादपूरणे । अस्य रूपसत्त्वबलानि पितृ-समानि हृदयमेव विपरीतं दयारहितत्वात् । अनुष्टुप्छन्दः ।। ३९ ।।

भो इति--गृह्यताम्=नय, वयम्=शक्तिप्रदर्शनाय बहुवचनंप्रयोगः; अहं-मित्यर्थः, एनम्=घटोत्कचम्, अनुगमिष्यामः=अनुयास्यामः ।

मा मा इति--भवान्=महाभागः, एवम्=मदर्थे भवतः राक्षसानुगमनम्; मा=निषेधे वारणे, न युक्तम् । अहमेव गच्छामि न तु भवान् इति भावः ।

इसका गर्व भी ठीक ही है ।

इसका रूप, पराक्रम एवं साहस सब बाप-दादे के समान हैं । मगर प्रजा के उपर प्रेम न करने वाला इसका मन कैसा है ?

(प्रकट में) हे पुरुष ! छोड़ दो ।

घटोत्कच--नहीं छोड़ा जायेगा ।

भीम--हे ब्राह्मण ! अपने पुत्र को लीजिए । हम इसके साथ जाएंगे ।

दूसरा लड़का--नहीं नहीं । आप ऐसा न करें--

त्यक्ताः प्रागेव मे प्राणा गुरुप्राणेष्वपेक्षया ।
युवा रूपगुणोपेतो भवांस्तिष्ठतु भूतले ॥ ४० ॥

भीमः—आर्य ! मा मैवम् । क्षत्त्रियकुलोत्पन्नोऽहम् । पूज्यतमः खलु ब्राह्मणः । तस्माच्छरीरेण ब्राह्मणशरीरं विनिमातुमिच्छामि ।

घटोत्कचः—(आत्मगतम्) एवं क्षत्रियोऽयं, तेनास्य दर्पः । भवतु, इममेव हत्वा नेष्यामि । (प्रकाशम्) अथ केनायं वारितः ?

भीमः—मया ।

त्यक्ता इति—मे प्राणाः गुरुप्राणेषु अपेक्षया प्राक् एव त्यक्ताः रूपगुणोपेतः युवा भवान् भूतले तिष्ठतु इत्यन्वयः ।

मे=मम, प्राणाः=असवः, गुरुप्राणेषु=गुरूणाम् (मान्यजनानाम्) प्राणाः (असवः) तेषु, अपेक्षया (भक्त्या), प्राक्=पूर्वम्, एव=हि, त्यक्ताः=समर्पिताः, रूपगुणोपेतः=रूपम् (दर्शनीयाकृतिः) गुणाः (शौर्यादयः) च तैः उपेतः (युक्तः), युवा=तरुणः, भवान्=श्रीमान्, भूतले=धरण्याम्, तिष्ठतु=जीवतु सुदीर्घकालम् । अनुष्टुप्छन्दः ॥ ४० ॥

आर्य इति—आर्य=पूजनीय, मा मैवम्=एतन्न युक्तम् । अहम्=वक्ता, क्षत्रियेति=क्षत्रियाणाम् (मूर्धाभिषिक्तानाम्) कुलम् (वंशम्) तस्मिन् उत्पन्नः (जातः) । विनिमातुम्=विनिमयं कर्तुम् ।

एवमिति—दर्पः=अभिमानः । वारितः=अपवारितः, रुद्धः ।

मैंने मान्यजनों के प्राणों को बचाने के लिये अपने प्राणों को पहले से त्याग कर दिया है । अच्छे रूप एवं गुणों से सम्पन्न तरुण आप लम्बे समय तक पृथ्वी में जीवित रहें ।

भीम—आर्य ! ऐसा न कहें । मैं क्षत्रिय कुल में जन्मा हूं । ब्राह्मण सबसे पूज्य होते हैं । अतः मैं अपने शरीर से ब्राह्मण के शरीर का विनिमय करना चाहता हूं ।

घटोत्कच—(मन ही मन) ऐसा, यह क्षत्रिय है । इसीलिये तो ऐसा घमण्ड है । अच्छा, जो हो । इसी को मारकर ले जाऊँगा । (प्रकट में) तो इसको किसने रोका ?

भीम—मैंने ।

घटोत्कचः—किं त्वया ?

भीमः—अथ किम् ।

घटोत्कचः—तेन हि भवानेवागच्छतु ।

भीमः—एवमतिवीर्यबलं नानुगच्छामि । यदि ते शक्तिरस्ति बलात्कारेण मां नय ।

घटोत्कचः—किं मां प्रत्यभिजानीते भवान् ?

भीमः—मत्पुत्र इति जाने ।

घटोत्कचः—कथं कथं तव पुत्रोऽहम् ।

भीमः—कथं रुष्यति । मर्षयतु, मर्षयतु भवान् । सर्वाः प्रजाः क्षत्रियाणां पुत्रशब्देनाभिधीयन्ते । अत एवं मयाभिहितम् ।

अथ इति—अथ किम् = का शङ्का तत्र, अवश्यमेव मया ।

एवमिति—एवम् = बाढम् । अतिवीर्यबलम् = अतिशयेन वीर्यम् (पराक्रमम्) बलम् (शक्तिः) च यस्मिन् स तम्, न अनुगच्छामि = न पश्चाद्वर्ती भवामि । बलात्कारेण = बलप्रयोगेण ।

किमिति—प्रत्यभिजानीते = जानाति सम्यक्

कथमिति—मर्षयतु = क्षमताम्; प्रजाः = जनाः, अभिधीयन्ते = उच्यन्ते व्यवह्रीयन्ते च । अभिहितम् = उक्तम् ।

घटोत्कच—क्या आपने ?

भीम—और क्या ?

घटोत्कच—तो आप ही आइए ?

भीम—ठीक है । वीर और बलवान् के पीछे मैं नहीं जाता हूँ । यदि आपके पास शक्ति हो तो मुझे बलपूर्वक ले चलें ?

घटोत्कच—आप नहीं जानते कि मैं कौन हूं ?

भीम—'मेरा लड़का' कहकर जानता हूं ।

घटोत्कच—कैसे ? मैं आपका पुत्र कैसे ?

भीम—क्यों गुस्साते हैं । क्षमा करें ! सारी प्रजा क्षत्रियों के पुत्र कही जाती है । इसीलिये मैंने ऐसा कहा ।

घटोत्कचः--भीतानामायुधं गृहीतम् ।

भीमः--

शपामि सत्येन भयं न जाने ज्ञातुं तदिच्छामि भवत्समीपे ।
किं रूपमेतद्वद भद्र तस्य गुणागुणज्ञः सदृशं प्रपत्स्ये ।। ४१ ।।

घटोत्कचः--एष ते भयमुपदिशामि । गृह्यतामायुधम् ।

भीमः--आयुधमिति, गृहीतमेतत् ।

भीतानामिति--भीतानाम्=त्रस्तानाम्, आयुधम्=अस्त्रम्; क्षमार्थं प्रयोज्यम् ।

शपामीति--भद्र ! सत्येन शपामि भयम् न जाने भवत्समीपे तत् ज्ञातुम् इच्छामि अस्य किम् रूपम् एतत् वद गुणागुणज्ञः सदृशम् प्रपत्स्ये इत्यन्वयः ।

हे भद्र=हे कल्याण, सत्येन=तथ्येन, शपामि=शपथं करोमि, यदहम् भयम्=भयनामकपदार्थम् किं भयमिति, न जाने=नो बोधामि, भवत्समीपे=त्वत्सकाशम्, तत्=किं भयमिति, ज्ञातुम्=वेदितुम्, इच्छामि=वाञ्छामि, अस्य=भयस्य, किम्=कीदृशम्, रूपम्=आकारः इति एतत्, वद=ब्रूहि, गुणागुणज्ञः=गुणान् (लाभान्) अगुणान् (दोषान्) च जानाति (वेत्ति) इति गुणदोषाभिज्ञः तम् सदृशम्=उपयुक्तम्, प्रपत्स्ये=करिष्यामि । उपजातिच्छन्दः ।। ४१ ।।

एष इति--एषः=यदि एवमस्ति चेत्, अहम् ते त्वाम् भयम्=भीतिम्, उपदिशामि=शिक्षामि । आयुधम्=अस्त्रम्, गृह्यताम्=हस्ते धार्यताम् ।

आयुधमिति--आयुधमिति=अस्त्रस्य वार्ता, एतत्=अस्त्रविशेषम्, गृहीतम्=धृतम् एव ।

घटोत्कच--आपने डरपोकों का हथियार ले लिया ।

भीम--हे सौम्य ! सत्य की शपथ खाकर कहता हूँ कि डर क्या होता है मैं नहीं जानता । यह मैं आपसे जानना चाहता हूं । इसका रूप क्या है ? बताइए । इसके गुण एवं दोष जानने के बाद जैसा ठीक होगा वैसा ही किया जाएगा ।। ४१ ।।

घटोत्कच--ठीक है । यह मैं आपको डर सीखाता हूं । हथियार ले लीजिए ।

भीम--हथियार की बात । यह तो ले लिया है ?

घटोत्कचः---कथमिव ।

भीमः--

काञ्चनस्तम्भसदृशो रिपूणां निग्रहे रतः ।
अयं तु दक्षिणो बाहुरायुधं सहजं मम ॥ ४२ ॥

घटोत्कचः---इदमुपपन्नं पितुर्मे भीमसेनस्य ।

भीमः--अथ कोऽयं भीमो नाम ।

विश्वकर्ता शिवः कृष्णः शक्रः शक्तिधरो यमः ।
एतेषु कथ्यतां भद्र केन ते सदृशः पिता ॥ ४३ ॥

कथमिति--कथमिव=कथं गृहीतमिति मन्ये यत् भवान् निरायुध एव ।

काञ्चनेति--मम काञ्चनस्तम्भसदृशः रिपूणाम् निग्रहे रतः अयम् दक्षिणः बाहुः तु सदृशम् आयुधम् इत्यन्वयः ।

मम=मे, काञ्चनेति=काञ्चनस्य (स्वर्णस्य) स्तम्भः (स्थूणा) तेन सदृशः (तुल्यः), रिपूणाम्=अरीणाम् 'रिपौ वैरिसपत्नारि' इत्यमरः, निग्रहे (दमने), रतः=अभ्यस्तः अविच्छिन्नरूपेण संलग्नत्वात्, अयम्=दृश्यमाणः; दक्षिणः=वामेतरः, बाहुः=भुजः, सदृशम्=उपयुक्तम्, आयुधतुल्यम्, पाठान्तरे सहजम्=स्वाभाविकम्, आयुधम्=अस्त्रम् । दक्षिणे भुजे सति नान्यस्यायुधस्य प्रयोजनमिति भावः ।

इदमिति--इदम्=एतादृग्वीर्यम्, उपपन्नम्=प्राप्तम् ।

विश्वकर्तेति--विश्वकर्ता, शिवः कृष्णः शक्तः शक्तिधरः यमः एतेषु ते पिता केन सदृशः ? हे भद्र ! कथ्यताम् इत्यन्वयः ।

विश्वकर्ता--ब्रह्मा, शिव=महेश्वरः, कृष्णः=वासुदेवः, शक्रः=इन्द्रः,

---

घटोत्कच--किस तरह ?

भीम--सुवर्ण के स्तम्भ के समान, वैरियों के दमन करने में अभ्यस्त एवं तत्पर यह मेरा दाहिना हाथ जन्म से मिला हुआ योग्य अस्त्र है ॥ ४२ ॥

घटोत्कच--यह तो मेरे पिता भीमसेन के लिये ही सम्भव है ।

भीम--तो यह भीम है कौन ?

भद्र ! ब्रह्मा, शिव, विष्णु, इन्द्र, कुमार, यम इनमें से तुम्हारे पिता किसके समान हैं ?

घटोत्कचः--सर्वैः।

भीमः--धिगनृतमेतत् ।

घटोत्कचः--कथं, कथमनृतमित्याह। क्षिपसि मे गुरुम्। भवत्विमं स्थूलं वृक्षमुत्पाट्य प्रहरामि। (उत्पाट्य प्रहरति।) कथमनेनापि न शक्यते हन्तुम्। किं नु खलु करिष्ये नु। भवतु, दृष्टम्। एतद् गिरिकूट-मुत्पाट्य प्रहरामि।

शक्तिधरः=कुमारः कार्तिकेयः, यमः=यमराट्, एतेषु=देवमुख्येषु, ते=तव, पिता=जनकः, केन सदृशः (तुल्यः)' हे भद्र=सौम्य ! कथ्यताम्=उच्यताम्। अनुष्टुप्छन्दः ॥ ४३ ॥

सर्वैरिति—सर्वे=ब्रह्ममहेश्वरवासुदेवशचीपतिकार्तिकेययमादिभिः तुल्यः इति शेषः।

धिगिति--धिक्=निन्दनीयमेतत्, एतत्=सर्वतुल्यकथनम्, अनृतम्=असत्यम्।

कथमिति--कथम्=कस्माद्धेतोः, कथम्=केन प्रकारेण, अनृतम्=अलीकम्,। गुरुम्=पितरम्, क्षिपसि=निन्दसि। भवतु=स्यादेवम्, स्थूलम्=विशालकायम्, वृक्षम्=महीरुहम्, उत्पाट्य=उत्खनित्वा, प्रहरामि=ताडयामि। (उत्पाट्य=वृक्षम् दोर्भ्याम् आदाय, प्रहरति=ताडयति।) किन्नु करिष्ये=कोऽन्यः उपायोऽत्र। गिरिकूटम्=पर्वतशिखरम्।

घटोत्कच--सभी के।

भीम—झूठ, यह सरासर झूठ है।

घटोत्कच--कैसे ? यह कैसे झूठ है ? मेरे पिता का अपमान करते हो। अच्छा, इसी पेड़ को उखाड़ कर प्रहार करता हूं। (पेड़ को उखाड़ कर भीम पर प्रहार करता है) अरे ! कैसे ? इससे भी मारा नहीं जा सकता ? तो अब क्या करूं ? अच्छा समझ गया। इसी पहाड़ की चोटी को उखाड़ कर प्रहार करता हूं।

शैलकूटं मया क्षिप्तं प्राणानादाय यास्यति।

भीमः—

रुष्टोऽपि कुञ्जरो वन्यो न व्याघ्रं घर्षयेद्वने ॥ ४४ ॥

घटोत्कचः—(प्रहृस्य) कथमनेनापि न शक्यते हन्तुम्। किं नु खलु करिष्ये। दृष्टम्।

नन्वहं भीमसेनस्य पुत्रः पौत्रो नभस्वतः।
तिष्ठेदानीं सुसन्नद्धो नियुद्धे नास्ति मत्समः ॥ ४५ ॥

शैलकूटमिति—मया क्षिप्तम् शैलकूटम् प्राणान् आदाय यास्यति इत्यन्वयः।

मया=घटोत्कचेन, क्षिप्तम्=प्रहृतम्, शैलकूटम्=शैलस्य (गिरेः) कूटम् (शृङ्गम्), (ते) प्राणान्=असून्, आदाय=गृहीत्वा, यास्यति=गमिष्यति; तव इति शेषः।

रुष्ट इति—रुष्टः अपि वन्यः कुञ्जरः वने व्याघ्रम् न घर्षयेत् इत्यन्वयः।

रुष्टः=कुपितः, अपि=च, वन्यः=आरण्यकः, कुञ्जरः=हस्ती, वने=कानने; व्याघ्रम्=शार्दूलम्, न घर्षयेत्=नैव परिभवेत्। अत्यन्तकुपितोऽपि हस्ती शार्दूलं न परिभवति। अत्र हस्तिनः व्याघ्रपरिभवासामर्थ्यवर्णनात् लोकोक्तिरलङ्कारः। लक्षणन्तु 'लोकापवादानुकृतिर्लोकोक्तिः'। छन्दस्त्वनुष्टुप् ॥४४॥

नन्वहमिति—ननु अहम् भीमसेनस्य पुत्रः नभस्वतः पौत्रः इदानीम् सुसन्नद्धः तिष्ठ नियुद्धे मत्समः नास्ति इत्यन्वयः।

ननु=निश्चये अवधारणे, अहम्=घटोत्कचः, भीमसेनस्य=तन्नाम्नः पाण्डवस्य, पुत्रः=तनयः, नभस्वतः=वायोः 'नभस्वद्वातपवनपवमानप्रभञ्जनाः' इत्यमरः, पौत्रः=पुत्रस्य अपत्यं पुमान्, नप्ता अस्मि। इदानीम्=अधुना; सुसन्नद्धः=युद्धाय सुसज्जितो भूत्वा, तिष्ठ=स्थिरो भव, नियुद्धे=बाहुयुद्धे

मेरे द्वारा प्रहार किया गया वह पर्वत का शिखर तुम्हारे प्राणों को लेकर जायेगा।

भीम—कितना ही गुस्साया क्यों न हो जङ्गली हाथी जङ्गल में शेर को खींच नहीं सकता ॥ ४४ ॥

घटोत्कच—(प्रहार करके) कैसे इससे भी मारा नहीं जा सका। तो अब क्या करूँ। अच्छा समझ गया मैं भीमसेन का लड़का हूँ अतः बाहुयुद्ध में मेरे बराबर कोई नहीं है ॥ ४५ ॥

(इत्युभौ नियुद्धं कुरुतः ।)

घटोत्कचः (भीमसेनं बद्ध्वा)

व्रजसि कथमिह त्वं वीर्यमुल्लङ्घ्य बाह्वो-
र्गज इव दृढपाशैः पीडितो मद्भुजाभ्याम् ।

भीमः--(आत्मगतम्) कथं गृहीतोऽस्म्यनेन । भोः सुयोधन ! वर्धन्ते ते शत्रुपक्षाः । कृतरक्षो भव, । (प्रकाशम्) भोः पुरुष ! अवहितो भव ।

घटोत्कचः---अवहितोऽस्मि ।

'नियुद्धं बाहुयुद्धोऽथ' इत्यमरः, मत्समः=मत्सदृशो मल्लः, नास्ति=न विद्यते कोऽपि ।

इत्युभौ इति—उभौ=भीमघटोत्कचौ, नियुद्धम्=बाहुयुद्धम् ।

व्रजसीति--इह त्वम् मद्भुजाभ्याम् दृढपाशैः गज इव पीडितः बाह्वोः वीर्यम् उल्लङ्घ्य कथम् व्रजसि इत्यन्वयः ।

इह=अत्र अधुना, त्वम्=भवान्, मद्भुजाभ्याम् मम बाहुभ्याम्, दृढपाशैः दृढरज्जुभिः, गजः=हस्ती, इव पीडितः=व्याधितः सन्, मम बाह्वोः=भुजयोः, वीर्यम्=पराक्रमम्, उल्लङ्घ्य=अतिक्रम्य, कथम्=केन प्रकारेण, व्रजसि=गच्छसि । उपमाऽलङ्कारः ।

कथमिति--कथम्=केन प्रकारेण, अनेन=घटोत्कचेन, गृहीतः=बद्धः अस्मि । शत्रुपक्षं=वैरिसमूहम् । कृतरक्षः=कृता (विहिता) रक्षा (रक्षणोपायः, त्राणम्) येन सः । अवहितः=सावधानः सज्जितः ।

(दोनों बाहुयुद्ध [मल्लयुद्ध] करते हैं)

घटोत्कच---(भीमसेन को बाँधकर) अब कहो, मेरी भुजाओं से मजबूत रस्सी से बाँधे गये हाथी के समान बंधे हुए तुम मेरी भुजाओं की शक्ति का उल्लङ्घन कर अब यहाँ से किस प्रकार जा सकते हो ?

भीम---(मन ही मन) कैसे इसने मुझे पकड़ लिया । दुर्योधन, तुम्हारे वैरी बढ़ रहे हैं । अपनी रक्षा ठीक ढंग से करो । (प्रकट में) हे पुरुष, सावधान रहो ।

घटोत्कच—सावधान हूं ।

भीमः--(नियुद्धबन्धमवधूय)

व्यपनय बलदर्पं दृष्टसारोऽसि वीर !
न हि मम परिखेदो विद्यते बाहुयुद्धे ॥ ४६ ॥

घटोत्कचः--कथमनेनापि न शक्यते हन्तुम् । किं नु खलु करिष्ये । भवतु, दृष्टम् । अस्ति मातृप्रसादलब्धो मायापाशः, तेन बध्वैनं नेष्यामि । कुतः खल्वापः । भो गिरे ! आपस्तावत् । हन्त स्रवति । (आचम्य मन्त्रं जपति ।) भोः पुरुष !

मायापाशेन बद्धस्त्वं विवशोऽनुगमिष्यसि ।
राजसे रज्जुभिर्बद्धः शक्रध्वज इवोत्सवे ॥ ४७ ॥

नियुद्धेति--नियुद्धबन्धम्=बाहुयुद्धबन्धम्, अवधूय=तिरस्कृत्य,

व्यपनयेति—वीर दृष्टसारः असि बलदर्पम् व्यपनय हि मम बाहुयुद्धे परिखेदः न विद्यते हि इत्यन्वयः ।

हे वीर=हे पराक्रमशालिन्, दृष्टसारः=दृष्टः (प्रत्यक्षीकृतः) निरीक्षितः सारः (बलम्) 'सारो बले स्थिरांशे च' इत्यमरः, येन सः असिः बलदर्पम् =बलस्य (शक्तेः) दर्पम् (अभिमानम्), व्यपनय=परित्यज, हि=इति हेतौ, मम=मे, बाहुयुद्धे=बाह्वोः (भुजयोः) युद्धे (रणे) मल्लयुद्धे, परिखेदः (श्रमः, विषादः) न विद्यते=नास्ति । मालिनीवृत्तम् ॥ ४६ ॥

कथमिति--मातृप्रसादलब्धः=मातुः (जनन्याः) प्रसादः (अनुग्रहः) तेन लब्धः (प्राप्तः), मायापाशः=मायायाः (राक्षसीमायायाः) पाशः (बन्धनम्), कुतः खल्वापः=वारि अत्र कुत्र लभ्यते । भो गिरे=हे पर्वत ! आपस्तावत्=जलं देहि । हन्त=इति हर्षे 'हन्त हर्षे विषादे च' इत्यमरः, स्रवति=जलं प्रस्रवति । आचम्य=आचमनं कृत्वा, मन्त्रम्=मायापाशमन्त्रम्;

मायापाशेनेति--मायापाशेन बद्धः विवशः त्वम् न करिष्यसि उत्सवे रज्जुभिः बद्धः शक्रध्वज इव राजसे इत्यन्वयः ।

मायापाशेन=माया (ऐन्द्रजालिकलीला) एव पाशः (बन्धनम्) तेन;

भीम--(बाहुपाश का बन्धन तोड़कर)

हे वीर, अपने बल का घमण्ड छोड़ दो तुम्हारा बल देख चुका हूं । मल्लयुद्ध से मुझे कोई थकावट नहीं है ॥ ४६ ॥

घटोत्कच--अरे ! यह कैसे ? इससे भी मारा नहीं जा सका । तो क्या

(इति मायया बध्नाति।)

भीमः—कथं मायापाशेन बद्धोऽस्मि। किमिदानीं करिष्ये। भवतु दृष्टम्। अस्ति मे महेश्वरप्रसादाल्लब्धो मायापाशमोक्षो मन्त्रः। तं जपामि। कुतः खल्वापः ? भवतु, भो ब्राह्मणकुमार! आनय कमण्डलुगता अपः।

बद्धः (आबद्धः) अत एव विवशः=विगतः (अपगतः) वशः (स्वातन्त्र्यम्) यस्य सः, परतन्त्रो भूत्वा, त्वम् न गमिष्यसि=कुत्रापि गन्तुं न शक्नोषि अतः मामेवानुगमिष्यसि, तथाभूतस्त्वम्, उत्सवे=तदर्थायोजितमहोत्सवे, रज्जुभिः (बन्धनैः) बद्धः=आबद्धः, शक्रध्वजः=शक्रस्य (इन्द्रस्य) ध्वजः (केतुः) इव पाशेन बद्धः सन् राजसे=शोभसे। (इन्द्रध्वजमहोत्सवपरम्परा नेपालदेशे अधुनाऽपि राष्ट्रीयपर्वरूपेण जीवितोऽस्ति। भाद्रशुक्लद्वादश्याम् इन्द्रध्वजोत्थानम्, भाद्रशुक्लचतुर्दश्याम् इन्द्रध्वजमहोत्सवः)। उपमाऽलङ्कारः अनुष्टुप्छन्दः॥ ४७॥

कथमिति—महेश्वरेति=महेश्वरस्य (शङ्करस्य) प्रसादः (कृपा) तेन लब्धः (प्राप्तः), मायेति=मायापाशान्मोचयतीति।

करूँ। अच्छा, समझ गया। मेरी माँ की कृपा से प्राप्त मायापाश है। उसी से इसको बाँधकर ले जाऊंगा। मगर पानी कहाँ? हे पर्वत मुझे जल दो। अहा! यह वह रहा है। (आचमन करके मन्त्र जपता है) हे पुरुष! मेरे मायापाश से बँधे जाने पर विवश होकर तुम कहीं नहीं जा पाओगे और मेरे पीछे पीछे आओगे। तब तुम उत्सव में रस्सी से बँधे (इन्द्रध्वज के समान, मायापाश से बँधे हुए, शोभा पाओगे। (इन्द्रध्वज का उत्सव भाद्रशुक्ल चतुर्दशी को मनाया जाता है। नेपाल में यह एक राष्ट्रीय उत्सव है।)॥ ४७॥

भीम—अरे! मैं कैसे मायापाश से बँधा गया। अब क्या करूँ। मेरे पास भगवान शंकर की कृपा से प्राप्त मायापाश छुडाने का मन्त्र है। उसको जपता हूं। मगर पानी कहाँ? अच्छा, हे ब्राह्मणकुमार, कमण्डलु में रखा जल लाओ।

वृद्धः--इमा आपः ।

(भीमः आदायाचम्य मन्त्रं जप्त्वा मायामपनयति ।)

घटोत्कचः--अये पतितः पाशः । किमिदानीं करिष्ये । भवतु, दृष्टम् । भोः पुरुष ! पूर्वसमयं स्मर ।

भीमः--समयमिति । एष स्मरामि । गच्छाग्रतः ।

(उभौ परिक्रामतः)

वृद्धः--पुत्रकाः किं कुमः । अयं गच्छति वृकोदरः ।

आक्रम्य राक्षसमिमं ज्वलदुग्ररूप-
मुग्रेण बाहुबलवीर्यगुणेन युक्तम् ।
एष प्रयाति शनकैरवधूय शीघ्र-
मासारवर्षमिव गोवृषभस्सलीलम् ॥ ४८ ॥

इमा इति--इमाः आपः =जलं गृह्यताम् ।

अये इति--पूर्वसमयम्=पूर्वशपथम् स्व-शरीरेण ब्राह्मणपुत्रशरीरविनिमय-शपथम् ।

समयमिति--समयः=शपथः इति ।

पुत्रकाः इति--वृकोदरः=भीमसेनः ।

आक्रम्येति--एषः ज्वलदुग्ररूपम् उग्रेण बाहुबलवीर्येण युक्तम् इमम् राक्षसम् आक्रम्य शनकैः आसारवर्षम् शीघ्रम् अवधूय गोवृषभः इव सलीलम्, याति इत्यन्वयः ।

एषः=भीमः, ज्वलदुग्ररूपम्=ज्वलत् (देदीप्यमानम्) उग्रम् (भीमम्) रूपम् (आकृतिः) यस्य स तम्, उग्रेण=भयङ्करेण महता, बाहुबलवीर्यगुणेन=

वृद्ध--यह जल लीजिए ।

(भीम आचमन करके मन्त्र जपते हैं और मायापाश छुड़ाते हैं ।)

घटोत्कच--अरे, यह पाश तो छूट गया । अब क्या करूं ? अच्छा समझ गया । हे पुरुष ! पहले किए हुये शपथ को याद कीजिये ।

भीम--शपथ ? अच्छा, मुझे याद है । आगे चलो ।

(दोनों घूम जाते हैं)

वृद्ध--लड़कों ! हम लोग क्या करें । ये भीम तो जा रहे हैं ।

घटोत्कचः--इह तिष्ठ। त्वदागमनमम्बायै निवेदयामि।

भीमः--वाढम्। गच्छ।

घटोत्कचः--(उपसृत्य) अम्ब! अयमभिवादये घटोत्कचोऽहम्। चिराभिलषितोभवत्या आहारार्थंमानीतो मानुषः।

(प्रविश्य)

हिडिम्बा--जाद! चिरं जीव। [जात! चिरं जीव।]

घटोत्कचः--अनुगृहीतोऽस्मि।

बाह्वोः (भुजयोः) बलम् (शक्तिः) वीर्यम् (पराक्रम्) गुणाः (शौर्यादयः) च तेषां समाहारस्तेन, युक्तम्=सम्पन्नम्, इमम्=गच्छन्तम्, राक्षसम्=यातुधानम्, आक्रम्य=अभिभूय, शनकैः=शनैः, आसारवर्षम्=आसारः (धारासंपातः) 'धारासंपात आसारः' इत्यमरः, तस्य वर्षम् (वृष्टिम्), शीघ्रम्=अचिरादेव, अवधूय=तिरस्कृत्य, गोवृषभः=महोक्षः, इव, सलीलम्=सविलासम्, गच्छति=याति। उपमाऽलङ्कारः। अनुष्टुप्छन्दः॥ ४८॥

इहेति--इह=गृहाद्बहिरेव, त्वदागमनम्=तवोपस्थितिम्, अम्बायै=मात्रे हिडिम्बायै, निवेदयामि=कथयामि।

बाढमिति--बाढम्, स्वीकारः।

अम्बेति--उपसृत्य=पार्श्वमुपगम्य, चिराभिलषितः=चिरेण (दीर्घकालम्) अभिलषितः (वाञ्छितः), आहारार्थम्=भोजनार्थम्।

जलता सा भयंकर रूप वाले अत्यन्त प्रचण्ड बाहुबल, वीरता एवं इनके गुणों से युक्त इस राक्षस को अभिभूत करके ये भीम मुसलाधार वर्षा की परवाह न करके टहलने वाले बैल की तरह धीरे-धीरे जा रहे हैं।

घटोत्कच--यहीं रुको! तुम्हें लाए जाने की खबर माँ को दे दूं।

भीम--ठीक है। जाओ।

घटोत्कच--(पास जाकर) माँ, मैं घटोत्कच प्रणाम करता हूं। बहुत समय से आपने खाने के लिए अभीप्सित मनुष्य आपके लिए लाया हूं।

(प्रवेश करके)

हिडिम्बा--बेटे! लम्बे समय तक जीओ।

घटोत्कच--अनुगृहीत हो गया हूं।

हिडिम्बा--जाद ! कीदिसो माणुसो आणीदो। [जात, कीदृशो मानुष आनीतः ।]

घटोत्कचः--भवति रूपमात्रेण मानुषः न वीर्येण।

हिडिम्बा--किं बह्मणो। [किं ब्राह्मणः ।]

घटोत्कचः--न ब्राह्मणः ।

हिडिम्बा--आदु थेरो [अथवा स्थविरः ।]

घटोत्कचः--न वृद्धः ।

हिडिम्बा--किं बालो : [किं बालः !]

घटोत्कचः--न बालः ।

हिडिम्बा--जइ एव्वं पेक्खामि दावणं । [यद्येव पश्यामि तावदेनम् ।]

(उभौ परिक्रामतः ।)

हिडिम्बा--किं एसो माणुसो आणीदो। [किमेष मानुष आनीतः ।]

घटोत्कचः--अम्ब ! कोऽयम्।

जातेति--कीदृशः=कीदृग्रूपः ।

भवतीति--वाङ्मात्रेण=वचनमात्रेण, रूपमात्रेण, (आकृत्या इति वा पाठः) न वीर्येण=न पराक्रमेण । आकृत्या एव मानुषः, न हि मानुषोचितपराक्रमः इति भावः ।

अथवेति--स्थविरः=गतवयस्कः ।

हिडिम्बा--कैसे मनुष्य को लाए हो ?

घटोत्कच--माँ यह आकृति से मनुष्य है, पराक्रम से नहीं।

हिडिम्बा--क्या यह ब्राह्मण है ?

घटोत्कच--नहीं; ब्राह्मण नहीं है।

हिडिम्बा--क्या बूढ़ा है ?

घटोत्कच--बूढ़ा नहीं है।

हिडिम्बा--क्या बच्चा है ?

घटोत्कच--नहीं बचचा नहीं है।

हिडिम्बा--यदि ऐसा है तो उसे मैं देखूंगी (दोनों घूमते हैं।)

हिडिम्बा--क्या इसी मनुष्य को लाये हो ?

घटोत्कच--माँ यह कौन है ?

हिडिम्बा—उम्मत्तअ दव्वदं खु अअम् । [उन्मत्तक, दैवतं खल्वयम् ।]

घटोत्कचः—आः कस्य दैवतम् ।

हिडिम्बा—तव अ, मम अ । [तव च, मम च ।]

घटोत्कचः—कः प्रत्ययः ।

हिडिम्बा—एसो पच्चओ । जेदु अय्यउत्तो । [अयं प्रत्ययः ! जयत्वार्यपुत्रः ।]

भीमः—(विलोक्य) का पुनरियम् । अये देवी हिडिम्बा ?

अस्माकं भ्रष्टराज्यानां भ्रमतां गहने वने ।
जातकारुण्यथा देवि ! सन्तापो नाशितस्त्वया ।। ४९ ।।

हिडिम्बे ! किमिदम् ।

कः इति—प्रत्ययः = कारणम्, विश्वासः, प्रमाणम् इति वा ।

एषः इति—आर्यपुत्रः=नाथः ।

अस्माकमिति—देवि, जातकारुण्यया त्वया भ्रष्टराज्यानाम् गहने बने भ्रमताम् अस्माकम् सन्तापः नाशितः इत्यन्वयः ।

हे देवि=हे भगवति ! जातेति=जातम् (उत्पन्नम्) कारुण्यम् (दया) यस्या सा तया, त्वया=भवत्या, भ्रष्टेति=भ्रष्टम् (च्युतम्) राज्यम् येषान्तेषाम् राज्यवहिष्कृतानाम्, गहने = घोरे, कानने=वने, भ्रमताम्=अटताम्, अस्माकम् (पाण्डवानाम्), सन्तापः (तापज्वरः) नाशितः (दूरीकृतः) ।। ४९ ।।

हिडिम्बे इति—किमिदम्=किन्निमित्तमिदम् कृत्यम् ।

हिडिम्बा—अरे, पागल, यह तो देवता है ।

घटोत्कच—ओः ! ये किसके देव हैं ?

हिडिम्बा—तुम्हारे और मेरे ।

घटोत्कच—क्या प्रमाण है ?

हिडिम्बा—यह प्रमाण है । आर्यपुत्र ! जय हो ।

भीम—(देखकर) यह फिर कौन ? अहा ! हिडिम्बा देवी ।

हे देवी; राज्य से निकाले गये एवं घोर वन में घूमने वाले हमलोगों के ताप को तुमने दया करके मिटा दिया था ।

हिडिम्बा—यह सब क्या है ?

हिडिम्बा [कर्णे] अय्यउत्त ! ईदिसं विअ । [आर्यपुत्र ! ईदृशमिवं । [

भीमः---जात्या राक्षसी, न समुदाचारेण ।

हिडिम्बा---उम्मत्तअ ! अभिवादेहि पिदरं । [उन्मत्तक ! अभिवादयस्व पितरम् ।]

घटोत्कचः---भोस्तात !

अज्ञानात्तु मया पूर्वं यद्भवान्नाभिवादितः ।
अस्य पुत्रापराधस्य प्रसादं कर्तुमर्हसि ।। ५०

अहं स धार्तराष्ट्रवनदवाग्निर्घटोत्कचोऽभिवादये । पुत्रचापलं क्षन्तु-महंसि ।

जात्येति---जात्या = जन्मना, समुदाचारेण=सदाचारेण ।

अज्ञानादिति---मया भवान् पूर्वम् तु अज्ञानात् यत् न अभिवादितः अस्य पुत्रापराधस्य प्रसादम् कर्तुम् अर्हसि इत्यन्वयः ।

मया = घटोत्कचेन, भवान्=श्रीमान्, पूर्वम्=प्रथमम्, प्राक्, तु अज्ञानात्= तातोऽयमिति ज्ञानाभावेन, नाभिवादितः=नो वन्दितः न सत्कृतः, अस्य, पुत्रापराधस्य=पुत्रस्य (सुतस्य) अपराधः (आगः) 'आगोऽपराधो मन्तुश्च' इत्यमरः, तस्य, प्रसादम् = अनुग्रहम्, कर्तुम् = विधातुम्, अर्हसि = योग्योऽसि । वालोऽयमिति मत्वा ममापराधं क्षमस्व इति भावः ।। ५० ।।

अहमिति---धार्तेति = धृतराष्ट्रस्य अपत्यानि पुमांसः धार्तराष्ट्राः (दुर्यो-

---

हिडिम्बा---(कान में) आर्यपुत्र ! ऐसा ही है ।

भीम---जाति से राक्षसी, आचार से नहीं ।

हिडिम्बा---अरे पागल ! पिता को प्रणाम कर ।

घटोत्कच---पिताजी,

पहले मैंने न पहचानने से आपको जो प्रणाम नहीं किया है, अपने लड़के के इस अपराध को आप क्षमा करें ।

यह धृतराष्ट्र के लड़के रूप जंगल की आग घटोत्कच प्रणाम करता है । लड़के की चञ्चलता को क्षमा करें ।

भीमः--एह्येहि पुत्र ! व्यतिक्रमकृतं क्षान्तमेव । (इति परिष्वज्य) अयं स धार्तराष्ट्रवनदावाग्निः । पुत्रापेक्षीणि खलु पितृहृदयानि । पुत्र, अतिबलपराक्रमो भव ।

घटोत्कचः--अनुगृहीतोऽस्मि ।

वृद्धः--एवं भीमसेनपुत्रोऽयं घटोत्कचः ।

भीमः--पुत्र ! अभिवादयात्रभवन्तं केशवदासम् ।

घटोत्कचः--भगवन्नभिवादये ।

वृद्धः--पितृसदृशगुणकीर्तिर्भव ।

घटोत्कचः--अनुगृहीतोऽस्मि ।

वृद्धः--भो वृकोदर ! रक्षितमस्मत्कुलं, स्वकुलमुद्धृतं च । गच्छामस्तावत् ।

धनादयः) त एव वनम् (काननम्) तस्य दवाग्निः (काननाग्निः), अभिवादये=प्रणमामि, पुत्रचापलम्=सुतचपलताम् ।

एह्येहीति--व्यतिक्रमकृतम् (पौर्वापर्यव्यत्ययेन) कृतम् (विहितम्), क्षान्तमेव, परिष्वज्य=आलिङ्ग्य, पुत्रापेक्षीणि=पुत्रस्य (सुतस्य) अपेक्षा

भीम—आओ बेटे ! अपराध तो माफ कर ही दिया । यह धार्तराष्ट्र रूप वन की आग है । पिता का हृदय पुत्र की अपेक्षा करने वाला होता हैं । बेटे ! बहुत बल और पराक्रम वाले बनो ।

घटोत्कच—बड़ी कृपा है ।

वृद्ध--अच्छा, यह भीम का पुत्र घटोत्कच है ?

भीम--बेटे ! श्रीमान् केशवदास को प्रणाम करो ।

घटोत्कच--(वृद्ध को) भगवन्, मैं प्रणाम करता हूं ।

वृद्ध--पिता के समान ही गुण एवं कीर्ति वाले बनो ।

घटोत्कच—बड़ी कृपा है ।

वृद्ध--हमारे कुल को बचा लिया है । अपने कुल का भी उद्धार किया गया है । तो अब हम चलें ।

भीमः—

अनुग्रहात्तु भवतः सर्वमासीदिदं शुभम्।
आश्रमोऽदूरतोऽस्माकं तत्र विश्रम्य गम्यताम् ॥ ५१ ॥

वृद्धः—कृतमातिथ्यमनेन जीवितप्रदानेन। तस्माद् गच्छामस्तावत्।

भीमः—गच्छतु भवान् सकुटुम्बः पुनर्दर्शनाय।

वृद्धः—बाढम्। प्रथमः कल्पः।

(आवश्यकता, आकांक्षा) अस्य अस्तीति तानि, पितृहृदयानि=तातमनांसि, अतिबलपराक्रमः=अतीव बलम् (शक्तिः) पराक्रमः (सामर्थ्यम्) यस्य स।

पितृ इति—पितृसदृशगुणकीर्तिः=पित्रा (तातेन) सदृशाः (तुल्याः) गुणाः (शौर्यादयः) कीर्तिः (यशः) च यस्य स।

अनुग्रहादिति—इदम् तु सर्वम् भवतः अनुग्रहात् शुभम् आसीत् अस्माकम् आश्रमम् अदूरतः तत्र विश्रम्य गम्यताम् इत्यन्वयः।

इदम्=यद्घटितम्=सर्वम् भवत्कुलरक्षा अस्मदीयकलत्रपुत्रसंयोगश्च, भवतः=तव श्रीमतः, अनुग्रहात्=प्रसादतः, शुभम्=शोभनम्, आसीत्=अभूत्, अस्माकम्=पाण्डवानाम्, आश्रमः=वनवसतिः, अदूरतः—सन्निकटमेव, अस्ति, तत्र=तस्मिन्नाश्रमे, विश्रम्य=क्षणं स्थित्वा श्रममपनीय, गम्यताम्=सुखं प्रस्थीयताम्।

कृतमिति—जीवितप्रदानेन—जीवनरक्षणेन आतिथ्यम्=अतिथिसत्कारः कृतम्=विहितम्।

गच्छतु इति—सकुटुम्बः=पुत्रकलत्रयुतः, पुनर्दर्शनाय=पुनर्दर्शनेनाऽनुग्रहीतुम्।

बाढमिति—प्रथमः=शुभः मुख्यः, कल्पः=विचारः विधिश्च।

भीम—आप की कृपा से यह सब अच्छा हो गया। हमारा आश्रम यहाँ से कोई दूर नहीं है। वहाँ थोड़ी देर विश्राम कर जाइये।

वृद्ध—इस जीवनरक्षा से सबसे बड़ा अतिथि सत्कार हो गया। इसी लिए अब हम चलें।

भीम—तो आप परिवार सहित फिर दर्शन देने की कृपा करते हुए जाएँ।

वृद्ध—बहुत ठीक। यह मुख्य विधि है।

(सपुत्रत्रयकलत्रो निष्क्रान्तः केशवदासः)

भीमः—हिडिम्बे ! इतस्तावत् । वत्स घटोत्कच ! इतस्तावत् । तत्र-भवन्तं केशवदासम् आश्रमपदद्वारमात्रमपि संभावयिष्यामः ।

(भरतवाक्यम्)

यथा नदीनां प्रभवः समुद्रो
यथाहुतीनां प्रभवो हुताशनः ।

सपुत्रेत्यादि—सपुत्रेति=पुत्राणाम् (सुतानाम्) त्रयम् तेन कलत्रेण (पत्न्या) च सहितः (युतः) ।

हिडिम्बे इति—इतस्तावत्=इतः आगच्छ, तत्रभवन्तम्=पूज्यम् आश्रमपदद्वारमात्रम्=आश्रमसीमापर्यन्तम्, संभावयिष्यामः=सत्कारार्थमनुगमिष्यामः ।

भरतवाक्यम्—भरतस्य (नटस्य) वाक्यम् (मंगलसूचकोक्तिः) ।

यथेति—यथा नदीनाम् समुद्रः प्रभवः यथा आहुतीनाम् हुताशनः प्रभवः यथा अपि इन्द्रियाणाम् मनः प्रभवं तथा नः भगवान् उपेन्द्रः प्रभु इत्यन्वयः ।

यथा=यादृग्रूपेण, नदीनाम्=सरिताम् 'नदी सरित्' इत्यमरः, समुद्रः=अब्धिः 'समुद्रोऽब्धिरकूपारः' इत्यमरः, प्रभवः=उत्पत्तिहेतुः यथा आहुतीनाम्—हुतद्रव्याणाम्, हुताशः=अग्निः; प्रभवः—आश्रस्थानम् । यथा—अपि=च, इन्द्रियाणाम्—ज्ञानकर्मेन्द्रियाणाम्, मनः=हृदयम्, प्रभवम्=आश्रयभूमि। नियामकत्वात्, तथा नः=अस्माकम्, भगवान्=भगम् (षड्विधैश्वर्यम्) ऐश्वर्यस्य समग्रस्य दानस्य यशसः श्रियः । ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णां भग

भीम—हिडिम्बा, इधर आओ । बेटे घटोत्कच, इधर आओ । भगवान् केशवदास को आश्रम की सीमा के बाहर तक पहुंचा आवें ।

(भरत वाक्य)

जैसे समस्त नदियों के स्वामी समुद्र हैं क्योंकि यही उसके लिए उत्पत्ति और लय का स्थान है, जैसे हवन किए गए पदार्थों का स्वामी अग्नि है, जैसे सभी कर्मेन्द्रियों एवं ज्ञानेन्द्रियों का एक मात्र आश्रय मन है क्योंकि ये सब

(तीन लड़कों एवं पत्नी सहित केशवदास जाते हैं)

यथेन्द्रियाणां प्रभवं मनोऽपि
तथा प्रभुर्नो भगवानुपेन्द्रः ॥ ५२ ॥
(निष्क्रान्ताः सर्वे ।)

॥ मध्यमव्यायोगं नाम नाटकं समाप्तम् ॥

—: ० :—

इतीरणा, इति, अस्यास्तीति, उपेन्द्रः = विष्णुः, प्रभुः = स्वामी, रक्षकः वृत्तमुपेन्द्रवज्रा । लक्षणन्तु उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ ।

नाट्यशास्त्रप्रणेतारं नटराजं च शारदाम् ।
नमस्कृत्य कलाटीकोपासकेन समापिता ॥

समाप्तश्चायं ग्रन्थः

मन से ही नियन्त्रित होते हैं, वैसे ही हम सब के लिये भगवान् विष्णु स्वामी एवं रक्षक हैं क्योंकि हमारी उत्पत्ति उन्हीं से है और लय भी उन्हीं में है।

'प्रतिकला' हिन्दी व्याख्या समाप्त



श्लोकानुक्रमणिका

नाटक-ग्रन्थाः

मध्यमव्यायोगः। 'कला' 'प्रतिकला' संस्कृत-हिन्दी व्याख्योपेत। व्याख्याकार पं० लोकमणि दाहाल। संस्कर्ता आचार्य श्री शेषराज शर्मा रेग्मी। ३-५०

मुद्राराक्षसनाटकम्। भावबोधिनी संस्कृत-हिन्दी व्याख्योपेतम्। व्याख्याकार श्री पं० कनकलाल ठक्कुर, भूमिका लेखक आचार्य शेषराज शर्मा रेग्मी १६-००

अभिज्ञानशाकुन्तलम्। पं० नवकिशोरकर शर्मा कृत 'किशोरकेली' संस्कृत तथा पं० रामतेज पाण्डेय कृत 'रुचिरा' हिन्दी व्याख्या, कान्तानाथ शास्त्री कृत परिक्षोपयोगीपत्रालोचन, भूमिका, नोट्स २५-००

स्वप्नवासवदत्तम्। पं० अनन्तरामशास्त्री वेतालकृत 'प्रबोधिनी' संस्कृत तथा पं० जगन्नाथ शास्त्री होशिंग कृत 'प्रकाश' हिन्दी टीका सहित भूमिका लेखक प्रो० कान्तानाथ शास्त्री तेलङ्ग १२-००

वेणीसंहारनाटकम्। प्रबोधिनी-प्रकाश संस्कृत हिन्दी टीका सहित। श्री रामदेव झा १५-००

उत्तररामचरितम्। 'चन्द्रकला-विद्योतिनी' संस्कृत-हिन्दी टीका सहित। सम्पूर्ण २०-००, षष्ठ अङ्क ५-००

रत्नावलीनाटिका। संस्कृत-हिन्दी टीकासहित। आ० रामचन्द्र मिश्र ६-००

विक्रमोर्वशीयम्। ,, ,, ,, १५-००

मृच्छकटिकम्। 'प्रबोधिनी' संस्कृत तथा 'प्रकाश' हिन्दी टीकासहित ३०-००

हनुमन्नाटकम्। 'विभा' संस्कृत-हिन्दी टीकासहित। श्री जगदीशमिश्र २०-००

विक्रान्तकौरवम्। 'प्रकाश' संस्कृत-हिन्दी टीका सहित १५-००

गौरीदिगम्बरप्रहसनम्। प्रकाश हिन्दीटिकासहित। श्रीतारिणीश झा २-००

प्रचण्डपाण्डवनाटकम्। सटिप्पण 'प्रकाश' हिन्दी टीका सहित ५-००

प्रभावतीपरिणयः। 'प्रकाश' हिन्दी टीकासहित। आ० रामचन्द्रमिश्र १५-००

नाटकचन्द्रिका। 'प्रकाश' हिन्दी व्याख्या सहित २५-००

नाट्यशास्त्रम्। 'मयूख' हिन्दी व्याख्या सहित। १-२ अध्याय १-००
